सन् १९४३

मूल्य १॥)

# लेखक का वक्तव्य

वर्तमान भूतोदधि-विनिर्गत तीर भूमि है। वर्तमान के तट पर निवास करने वालों के लिए भूत से सम्बन्ध विच्छेद करने में लाभ नहीं है। भूतकाल के अनुभव आधार पर ही एक सुन्दर भविष्य-भवन निर्माण किया जा सकता है। साहित्य मानवी-हृदयगत भावों का स्थायी कोष है। साहित्य ही भूत और वर्तमान की विचार शृङ्खला में अटूट सम्बन्ध स्थापित करता है। अतः वर्तमान-निवासी मानव का यह एक कर्तव्य हो जाता है कि अतीत के साहित्य का परिशीलन करे क्योंकि उसी में उसके पूर्वजों की विचार पयस्विनी विलास कर रही है। पंचत्व-प्राप्त पूर्वजों के पास तक पहुँचने, उनके चरणों में बैठकर उनसे विचार विनिमय करने का पूर्ण अवसर प्राचीन साहित्य के पठन पाठन से ही प्राप्त होता है।

ब्रज-भाषा मधुरतम भाषाओं में गिनी जाती है। एक समय था जब ब्रज भाषा का साहित्य साम्राज्य पर पूर्ण रूपेण आधिपत्य था; सर्वत्र उसकी तूती बोलती थी; विदेशी विद्वान् ब्रज-वीथियों में मातृ-अनुगता कन्याओं के भोले भाले मुख से निसृत ब्रज-भाषा के एक वाक्य में काव्य का पूर्ण लालित्य और रसालत्व प्राप्त कर मुग्ध होते थे। **"सबै दिन जात न एक समान।"** ब्रज-भाषा का वैभव भी भूत की वस्तु बन गया। किन्तु भूत की स्मृति मधुर होती है, तीर भूमि की भाँति हमारी स्मृति भी अतीत के अगाध सागर में अतल स्पर्शिनी बन जाती है। भूत कालिक उस स्मृति के नोदन से ही वर्तमान के यथार्थता के संग्राम में कुछ विनोद हो सकता है। अतः हिन्दी-साहित्य प्रेमियों का ब्रजभाषा से सम्बन्ध बना रहे इसीलिए प्रस्तुत संग्रह उपस्थित किया गया है।

सूदन का काल संवत् १७७५ से १८११ तक माना जा सकता है। कवि परिचय के अन्तर्गत उनके काल निर्णय का कुछ प्रयास किया गया है। सूदन का जन्म मथुरा में हुआ था और वे ब्रजान्तर्गत भरतपुर के हिन्दू राजा सुजानसिंह के आश्रित कवि थे। सुजान उस समय के इतिहास का प्रमुख पात्र है। यद्यपि राज्य सत्ता का संचालन दिल्ली से होता है किन्तु उनका वास्तविक सूत्रधार भरतपुर का युवराज श्री सुजानसिंह ही है। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् दिल्ली के नृप और मंत्री सभी भरतपुर की ओर सहायता के लिए टकटकी लगाते हैं। सुजान-चरित्र रूपी इतिहास में दिल्ली, दक्षिण और जयपुर का उतना ही वर्णन है जितना उनका भरतपुर से राजनैतिक सम्बन्ध है।

सुजान-चरित्र अपूर्ण ग्रन्थ है जिसमें सुजान की सात जंगों का वर्णन है। वर्णन अध्यायों में न हो कर जंगों के नाम से किया गया है। युद्ध वर्णन में कवि ने सेनापतियों के नाम तथा युद्ध में उनके स्थित होने के स्थानों का विस्तृत वर्णन किया है। अनेक हथियारों के चलाने का उल्लेख, योधाओं के युद्ध करने के ढङ्ग का वर्णन और वीरों के कट-कट कर भूमि पर गिरने का चित्रण कवि ने अधिक से अधिक किया है। सम्पूर्ण युद्धों का वर्णन समान सा ही है अतः प्रस्तुत संग्रह में उन वर्णनों को छोड़ दिया गया है किन्तु आभास मात्र संग्रहीत है जिसको पढ़कर पाठक पूर्ण युद्ध के वर्णन का चित्र अपने कल्पना के सहारे पूर्ण कर सकें। प्रस्तुत संग्रह में काट छाँट करते हुए भी इस बात का पूर्ण ध्यान रक्खा गया है कि कहीं कथा सूत्र विच्छिन्न न हो जाय। कथा का प्रवाह वैसा ही है जैसा कि सुजान-चरित्र के बड़े ग्रन्थ में। साधारण घटनाओं तक का समावेश संग्रह में है। सूदन ने अपने इस ग्रन्थ में अनेक भाषाओं का प्रयोग किया है उनका दिग्दर्शन मात्र कराने का प्रयत्न इस संग्रह में किया गया है। पाठकों को पढ़ते समय पंजाबी, ब्रजभाषा, अपभ्रंश और सूदन के विनिर्मित शब्दों का परिचय

मिलेगा। सूदन शब्दों को अपने छन्द के अनुसार छोटा बड़ा करने में बड़े सिद्धहस्त हैं। पाठकों को गाजीउद्दीनखाँ के नाम के साथ किये गये खिलवाड़ का परिचय मिलेगा तो तनिक भी अनुचित न होगा।

इस प्रस्तुत संग्रह को उपस्थित करने में मुझे मेरे परम मित्र श्रीगोपालप्रसादजी व्यास साहित्य रत्न से अत्यन्त उत्साह और सहायता प्राप्त हुई है। इस संग्रह को प्रस्तुत करने का पूर्ण श्रेय उन्हीं को है अतः मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। 'भारतवासी प्रेस' दारागंज के अध्यक्ष पं० प्रतापनारायणजी चतुर्वेदी का भी आभार मेरे ऊपर उतना ही है। इसके साथ साथ और भी अन्य महानुभावों का जिनसे मुझे किसी भी प्रकार की सहायता मिली है मैं खुले हृदय से आभार स्वीकार करता हूँ क्योंकि वे सभी धन्यवादास्पद हैं। संग्रह कार्य के सम्पादन में मैंने काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित सुजान चरित्र के द्वितीय संस्करण से सहायता ली है; अतः मैं उक्त सभा और माननीय सम्पादक के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। कहीं कहीं पर मैंने अपनी समझ से ही इतर मार्ग का अवलम्बन किया है। आशा है सहृदय पाठक मुझे इसके लिए क्षमा करेंगे और इसके दोषों को ध्यान में न रखकर अपनायेंगे और मेरे परिश्रम को सफल करेंगे।

| | | |
|---|---|---|
| इटावा | | लेखक |
| आश्विन शुक्ल १०, २००० | | 'सत्यप्रिय' |

# कवि-काव्य-परिचय

श्रीसूदनजी ने ग्रन्थारम्भ में मंगलाचरण—जिसमें 'गकार' से प्रारम्भ होनेवाले शब्दों का ही प्रयोग है—के अनन्तर प्रथम संस्कृत कवियों तथा महर्षियों की वंदना की है, तदुपरान्त हिन्दी के अनेक कवियों का नामोल्लेख किया है; किन्तु इन कवियों के नामोल्लेख में काल-क्रम का ध्यान नहीं रक्खा गया है। ये नाम संख्या में एक सौ पचहत्तर हैं। ये कवि सूदन के परवर्ती या समकालीन रहे होंगे। इनमें बहुत से कवियों के नाम नितान्त अप्रसिद्ध हैं। इस कवि-नाम-संकीर्तन के उपरान्त कवि ने एक सोरठे में अपना परिचय दिया है। वह सोरठा इस प्रकार है:—

**मथुरापुर सुभ धाम, माथुर कुल उतपत्ति वर।**
**पिता वसंत सुनाम, सूदन जानहु सकल कवि॥**

इस सोरठे से तो केवल इतना ही ज्ञात होता है कि यह मथुरा के किसी चौवे वंश में उत्पन्न हुए थे और इनके पिताजी का नाम वसंत था। इस सोरठे के अतिरिक्त कवि ने सम्पूर्ण काव्य के किसी भी प्रसंग में एक पंक्ति भी अपने विषय में नहीं कही और न इन्होंने किसी स्थान पर अपना जन्म संवत ही दिया है; किन्तु अपने आश्रय श्रीसुजान-सिंह—सूरजमल—के चरित्र वर्णन के लिये लिखे गये सुजान-चरित्र काव्य में इन्होंने महाराज द्वारा संवत् १८०२ से संवत् १८१० तक लड़े गये सात युद्धों का सविस्तर वर्णन किया है।

युद्धों का वर्णन पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है मानो कवि तत्तत् युद्ध का निरीक्षण करता हुआ किसी पार्श्ववर्ती पुरुष को उनका वर्णन सुनाता जाता है अर्थात् कवि का वर्णन पूर्ण फोटोग्राफिक ( चैत्रिक ) है। हमारे इस कथन का तात्पर्य यह है कि कवि महाराज सुजानसिंहजी के साथ-पृथ्वीराज के साथ कवि चंद की भाँति-युद्ध स्थल में अवश्य

जाते रहे होंगे। अतः आपका कविता काल संवत् १८०२ और संवत् १८०७ के बीच में ही मानना पड़ेगा।

मिश्रबन्धु विनोद में लिखा है—"जान पड़ता है कि संवत् १८१० के कुछ पीछे यह ग्रन्थ बना और इसी कारण प्रारम्भ में इसमें दिल्ली और दक्षिणी दलों की दुर्गति का वर्णन छः अध्याय में किया गया और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य का इतिहास में लिखा है—"सुजान चरित्र बहुत बड़ा ग्रन्थ है। इसमें संवत् १८०२ से ले कर सं० १८१० तक की घटनाओं का वर्णन है। अतः इसकी समाप्ति १८१० के दस पंद्रह वर्ष पीछे मानी जा सकती है। इस हिसाब से इनका कविता-काल सं० १८२० के आसपास माना जा सकता है।"

उपर्युक्त अवतरणों के विद्वान् लेखक सुजान चरित्र को सं० १८१० के बाद की रचना स्वीकार करते हैं। मिश्रबंधु अपने कथन के प्रमाण में कवि का निम्नलिखित हरिगीति छन्द उपस्थित करते हैं जिसको कवि ने प्रत्येक अंक के अंत में दिया है और जिसके प्रथम तीन चरण सर्वत्र रहते हैं, पर चतुर्थ चरण अध्याय के वर्णित विषय तथा अंक की गणना के अनुसार बदलता रहता है:—

भुव-पालक भूमिपति बदनेस नन्द सुजान हैं।
जानैं दिल्ली दल दक्खिनी कीने महा कलि कान हैं॥
ताको चरित्र कछूक सूदन कह्यो छंद बनाइकैं।
कहि देव ध्यान कवास नृप-कुल प्रथम अंक सुनाइकैं॥

इस पद की दूसरी पंक्ति में सुजानसिंह द्वारा दिल्ली दल और दक्खिनी दलों के नाश किये जाने का वर्णन है। सुजान के युद्ध अधिकतर इन्हीं दलों के साथ हुए थे। इनकी क्रमानुसार तालिका निम्नांकित है:—

१—सं० १८०२ में फतेहअली की सहायता कर असदखां को परास्त किया।

२—सं० १८०४ में दक्खिनी दलों ( मराठों ) को परास्त करने में जयपुराधीश ईश्वरसिंह की सहायता दी।

३—सं० १८०५ में दिल्ली दल जो सलावतखाँ बख्शी की अधीनता में भरतपुर पर आक्रमण करने आया था परास्त किया गया।

४—सं० १८०६ में पठानों को परास्त करने में दिल्ली के वजीर सफदर जंग की सहायता की।

५—सं० १८०६ में दिल्ली के बादशाह की आज्ञा से घासहरे के रावबहादुरसिंह बड़गूजर को हराया।

६—सं० १८१० में सफ़दर जंग की सहायता देने के लिए दिल्ली पर आक्रमण किया और उसे खूब लूटा।

७—सं० १८१० में दिल्ली की सेना ने मल्हारराव और आना ( मराठों ) की सहायता ले कर भरतपुर पर आक्रमण किया।

यदि **'जाने दिलीदल दक्खिनी कीने महाकवि काल हैं'** के आधार पर सुजान चरित्र को संवत् १८१० के बाद की रचना स्वीकार किया जाय वह भी असंगत है क्योंकि युद्ध की तालिका जो ऊपर दी गई है उससे विदित होता है कि सुजानसिंह ने सं० १८०४ में दक्खिनी दलों को परास्त किया है और सं० १८०५ में दिल्ली दलों को हराया है। मिश्रबन्धु के तर्क से भी सं० १८०५ और संवत् १८१० के मध्य की रचना मानी जा सकती है। इसके रचना काल की अन्तिम सीमा सं० १८१० इस कारण मानना पड़ता है कि संवत् १८१० की प्रारम्भ घटना जिसका वर्णन कवि ने सप्तम जंग के रूप में प्रारम्भ कर दिया और जिसका परिणाम सं० १८११ में नायक के पक्ष ही में निकलता है—अधूरी छोड़ दी गई है। इससे तो यही तात्पर्य निकलता है कि इस समय अवश्य ही कवि के ऊपर कोई जीवन सम्बन्धी लाचारी आ पड़ी है जिसने कवि को अपने नायक के स्वाभिमान-रक्षक घटना का भी

वर्णन बंद करने के लिए बाध्य किया है। मृत्यु के अतिरिक्त और कोई अन्य घटना मस्तिष्क में स्थान ही नहीं पाती है।

उपर्युक्त अवतरणों के लेखकों की ओर से यह भी तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि कवि ने संवत् १८१० के दस-पंद्रह वर्ष बाद लिखना प्रारम्भ किया और वर्णन करते करते जिस समय सं० १८१० की घटना पर आया तो काल का कठिन निमंत्रण आ गया और यह घटना लाचार होकर अधूरी छोड़नी पड़ी। इसके विरुद्ध हमारा यही कहना है कि कवि का वर्णन गत युद्धों का इतना चैत्रिक न होता जितना है।

अतः इससे यही निष्कर्ष निकला कि कवि का समय लगभग सं० १७७५ से सं० १८१० तक मानना पड़ेगा। संवत् १७७५ इस कारण निश्चित किया गया है कि संवत् १८०२ तक जब कि सुजानसिंह को युद्ध करने जाना पड़ा कवि अवश्य ही युवावस्था में पहुँच चुका होगा।

सुजान-चरित्र पूर्ण ऐतिहासिक चरित्र को ले कर लिखा गया है और उसकी ऐतिहासिक घटनाओं के वर्णन में कवि ने अतिरंजना का तनिक भी आश्रय नहीं लिया इसलिए वर्णन विशेष रुचिकर नहीं बन पड़ा है केवल वस्तु-परिगणना मात्र है। इस कारण सुजान चरित्र काव्य से अधिक इतिहास है। किन्तु कोई यह न समझे कि सुजान-चरित्र छन्द-बद्ध इतिहास ही इतिहास है वह काव्य है ही नहीं सो बात नहीं है। उसमें काव्य के गुण भी वर्तमान हैं। उसके गुणों का अवलोकन कुछ आगे करेंगे। यहाँ पर उसकी कमियों का दिग्दर्शन करते हैं।

किसी भी काव्य ग्रन्थ का शरीर भाषा होती है। पाठक के ऊपर भाषा का वही प्रभाव पड़ता है जो सुन्दर और सुगठित शरीर अथवा कुरूप और रुक्ष शरीर का पड़ता है। अर्थात् सौंदर्य युक्त शरीर सभी के चित्त को आनन्द का प्रसाद करता है और उसके विपरीत कुरूप और रुक्ष आकार वाले शरीर की ओर आकृष्ट होना तो दूर रहा

उसकी ओर कोई आँख उठा कर भी नहीं देखता; और यदि किसी गुण के कारण देखता है तो कुछ मुँह बनाकर। सुजान-चरित्र की भाषा के विषय में भी बहुत कुछ यही कहा जा सकता है। सूदन ने भाषा को तोड़ने और मरोड़ने में केशव और भूषण को भी मात दी है। सूदन का कोई भी शब्द किसी भी छन्द के अनुरूप रूप धारण कर लेता है; गाजीउद्दीनखाँ उसका एक उदाहरण है। इस नाम को सूदन ने कम से कम चार प्रकार से तोड़ा है। सूदन के इस काम से कुछ शब्द तो इतने दबे हैं कि पहचानने में भी नहीं आते। सुजान-चरित्र की भाषा में एक यही कमी नहीं है कि वह **जु** और **सु** के अत्यधिक प्रयोग से और भी अधिक शिथिल कर दी गई है। सूदन के इस जु और सु की अव्यर्थ और सर्वत्र गति है। वे '**काम जु बख्श**' की भाँति व्यक्तियों के नाम में भी बीच बिचाव करते देखे जाते हैं। इतने पर भाषा का पंचामृत तैयार किया गया है। उनकी भाषा में ब्रज, पंजाबी, अरबी, फारसी और कुछ मारवाड़ी के शब्द खूब मिले हैं। यह पंचामृत कवि की भाषा बहुज्ञता का प्रमाण है किन्तु पाठक की रुचि वल्लरी को नष्ट करने के लिए मट्ठा का कार्य करता है। दाँतों के नीचे कंकड़ों की भाँति कड़-कड़ाती हुई भाषा में ही वीर रस का परिपाक उत्तम माना जाता है अतः सूदन ने पंचामृत बनाना अच्छा समझा और **सोता था** के स्थान में '**सुत्ता था** लिखा; दूसरे युद्ध में चलाये जाने वाले हथियारों की ध्वनि का चित्रण करने के लिए सर ररंर, झर झझझरं झर झझझरं आदि अनेक निरर्थक चरणों का प्रयोग है। इन निरर्थक प्रयोगों से कवि का कोई विशेष अर्थ नहीं वह केवल रणक्षेत्र के शब्द चित्रण में ध्वनि का रंग भी भरना चाहता है। इतने पर भी रणक्षेत्र के चित्रण में कवि अपनी इच्छा के अनुसार सफल हुआ है।

भाषा के बाद बाह्य सौन्दर्य में छन्द का स्थान है। सूदन आधु-निक कलाकारों की भाँति छन्द को व्यर्थ नहीं मानता। केशव की राम-

छप्पय लूटत लंक उदंड चलत कोदंड भुसुंडी ।
जयरजंत घनघोर मार गोलनु की मंडी ॥
आसपास अजबीर भीर बनु सोरनु पारनु ।
निकसि सकै नहिं कोउ रैनि दिन क्रुद्ध चिकारनु ॥
इह भाँति कलुक वानर गए तब वरुणी रोसहिं भर्यो ।
सरदार मसि दरबार जे तिनहिं आपु आरनु कर्यो ॥

इस छन्द में वीर रस का सुन्दर परिपाक है । ऐसे ही रौद्र के उदाहरण भी मिल जायेंगे । यदि द्वितीय आवृत्ति का अवसर आया तो हम इनके उदाहरणों का समावेश भी कर देंगे ।

करुणा रस तो रौद्र और वीर रस का परिणाम है । जब वीर की वीरता का प्रकाशन किया जाता है तो एक ओर तो उसका वीर रस का प्रकाश होता है और दूसरी ओर करुणा का । जब रामचन्द्र के पराक्रम का विकास बन्दरों में वीर रस का सञ्चार करता है तो उसी का परिणाम रावण गृह में करुणा के रूप में आविष्कृत होता देखा जाता है ।

बाप विष चाखै भैया खटमुख राखै देखि,
आसन में राखै दसवास जाकौ अचलै।
भूतनु के छैया आस पास के रखैया,
और काली के नथैया हू के ध्यानहूँ ते न चलै॥
बैल बाघ वाहन बसन को गयंद खाल,
भाँग कौं धतूरे कौं पसार देतु अचलै।
घर को हवाल यहै शङ्कर की बाल कहै,
लाज रहै कैसे पूत मोदक कौं मचलै॥

इस पद्य में पूर्ण हास्य रस है। ऐसे पद्य हिन्दी साहित्य में अधिक संख्या में न मिलेंगे।

छटवीं जंग के द्वितीय अंक के अन्तिम छन्द भयानक रस के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इनमें से दो एक छन्द तो तुलसीकृत कवितावली के सुन्दरकाण्ड के छन्दों के समक्ष सफलता के साथ तौले जा सकते हैं। तुलसी का नाम लेने से यह तात्पर्य है कि वे पद्य आलोचकों द्वारा अत्यन्त प्रशंसित हुए हैं। इसी प्रकार वीभत्स रस के उदाहरण भी अत्यन्त अच्छे बन पड़े हैं। कहीं २ तो वीभत्स ने वीर रस की बड़ी अच्छी सेवा की है।

रसों के वर्णन में कवि की सामर्थ्य का जहाँ तहाँ परिचय मिलता ही है। रहीं अलंकारों की बात सो कवि ने प्रसंग से आये हुए रूपक और उत्प्रेक्षादि अलंकारों को पूर्ण रूपेण निवाहा है। समस्त देशवर्ती रूपकों के उदाहरण के रूप में—**चन्द्रभाल विष भू कराल सुरभोग मदहंसि** ······**रतनजुत सागर सम सूरज लसिय** वाला छप्पय; **गेंदा से गलफ गुल मेंहदी अतिमार** ······ **पर भूमि फूली फुलवारी मानौं कालकी और श्रोनित, अरव ढारि लुत्थि जुत्थि पावडे दे** ··· ······ **भली विधि पूजा कै प्रसन्न कीनो कालिका** वाले कवित्त जो इस संग्रह में भी संग्रहीत हैं—दिये जा सकते हैं।

छप्पय  छुट्टन लगे उद्दण्ड चण्ड कोदण्ड भुसुंडी ।
जबरजंग घनघोर मारु गोलनु की मंडी ॥
आसपास ब्रजवीर भीर बहु मारनु पारनु ।
निकसि सकै नहिं कोउ रैनि दिन जुद्ध विचारनु ॥
इह भाँति कछुक बासर गए तब बकसी गोरनहिं भख्यौं ।
सरदार मधि दरबार जे तिनहिं आपु आदरु करयौं ॥

इस छन्द में वीर रस का सुन्दर परिपाक है। ऐसे ही रौद्र के उदाहरण भी मिल जायेंगे। यदि द्वितीय आवृत्ति का अवसर आया तो ह इनके उदाहरणों का समावेश भी कर देंगे।

करुणा रस तो रौद्र और वीर रस का परिणाम है। जब वीर र वीरता का प्रकाशन किया जाता है तो एक ओर तो उसका वीर र का प्रकाश होता है और दूसरी ओर करुणा का। जब रामचन्द्र पराक्रम का विकास बन्दरों में वीर रस का सञ्चार करता है तो उस का परिणाम रावण गृह में करुणा के रूप में आविष्कृत होता देख जाता है।

चाप विष त्राखै सैया खटमुख राखै देखि,
आसन में राखै दसवास जाकौ अचलै।
भूतनु के छैया आस पास के रखैया,
और काली के नथैया हू के ध्यान हूँ ते न चलै॥
वैल बाघ वाहन वसन को गयंद खाल,
भाँग कौं धतूरे कौं पसार देतु अचलै।
घर को हवाल यहै शङ्कर की वाल कहैं,
लाज रहै कैसे पूत मोदक कौं मचलै॥

इस पद्य में पूर्ण हास्य रस है। ऐसे पद्य हिन्दी साहित्य में अधिक संख्या में न मिलेंगे।

छटवीं जंग के द्वितीय अंक के अन्तिम छन्द भयानक रस के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इनमें से दो एक छन्द तो तुलसीकृत कवितावली के सुन्दरकाण्ड के छन्दों के समक्ष सफलता के साथ तौले जा सकते हैं। तुलसी का नाम लेने से यह तात्पर्य है कि वे पद्य आलोचकों द्वारा अत्यन्त प्रशंसित हुए हैं। इसी प्रकार वीभत्स रस के उदाहरण भी अत्यन्त अच्छे बन पड़े हैं। कहीं २ तो वीभत्स ने वीर रस की बड़ी अच्छी सेवा की है।

रसों के वर्णन में कवि की सामर्थ्य का जहाँ तहाँ परिचय मिलता ही है। रही अलंकारों की बात सो कवि ने प्रसंग से आये हुए रूपक और उत्प्रेक्षादि अलंकारों को पूर्ण रूपेण निवाहा है। समस्त देशवर्ती रूपकों के उदाहरण के रूप में—**चन्द्रभाल विष भू कराल सुरभोग मदहंसि**·····**रतनजुत सागर सम सूरज लसिय** वाला छप्पय; **गेंदा से गलफ गुल मेंहदी अतिभार**·······**पर भूमि फूली फुलवारी मानौं कालकी और श्रोनित, अरघ ढारि लुत्थि जुत्थि पावडे दे**·········**भली विधि पूजा कै प्रसन्न कीनी कालिका** वाले कवित्त जो इस संग्रह में भी संग्रहीत हैं—दिये जा सकते हैं।

# सुजानसिंह का चरित्र

मनुष्य मनुष्य की प्रशंसा बहुत कम करता है। यदि वह कभी मनुष्य की प्रशंसा करने में प्रवृत्त भी होता है तो केवल मनुष्य के दैवी गुणों से प्रेरित हो कर। मनीषियों ने इन गुणों के नाम अवस्था और काल भेद से अनेक रक्खे हैं। मनुष्य स्वभावतः अन्य पार्थिव के सुख दुख से सुखी और दुखी होता है; इसी भावना से प्रेरित हो कर यदि वह किसी दुखी की धन से सहायता करता है तो उसे हम उदारता का नाम दे डालते हैं; किसी आततायी के विरुद्ध प्रयुक्त शक्ति को वीरता और पराक्रम का नाम दिया जाता है। दुःखी के दुःख से आर्द्रचित्त हो कर उसको सान्त्वना और धैर्य देने को सौजन्य और दया के नाम से पुकारते हैं। तात्पर्य यह है कि एक भावना के ही अनेक रूपों का नाम अनेक गुणों की संख्या है। हाँ! तो मनुष्य अपने वर्गीय की इस भावना के रूपों का अवलोकन कर ही उसकी ओर आकृष्ट होता है। कवि भी अपने आश्रयदाता की ओर इसीलिए आकृष्ट होता है और उसके गुणों के वर्णन में अतिशयोक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग अपनी प्रतिभा से करता है।

सूदन का आश्रयदाता सुजानसिंह भी उपर्युक्त गुणों से भूषित है। उसके ये गुण इतिहास में प्रसिद्ध हैं। किन्तु सूदन उसके पराक्रम, शौर्य आदि गुणों से ही अधिक प्रभावित हुए हैं। सूदन ने अपने काव्य-सुजान-चरित्र में इन्हीं गुणों का विशेष वर्णन किया है। यदि यह कहा जाय कि कवि ने नायक के केवल इन्हीं गुणों का वर्णन किया है तो अनुचित न होगा। मेरे इस कथन से यह भी तात्पर्य नहीं है कि उन्होंने आश्रयदाता में सौजन्य, उदारता और दया आदि गुणों को आने ही

पूर्व ३८ मील के फासले पर स्थित एक कस्बा) को नष्ट भ्रष्ट कर दिया था—दण्ड देने को अपना सेनापति भेजा था।

सूरजमल के सबसे प्रथम पूर्वज का नाम जिससे ग्रन्थकार सूदन जी ने इस वंश का प्रारम्भ माना है भूरेसिंह था। इन भूरेसिंह भूप से आठवीं पीढ़ी पर भावसिंह उदित हुए। यह मौजा सिनसिन में निवास करते थे। यही भावसिंह इतिहास में भज्जा के नाम से प्रसिद्ध हैं और इन्होंने ही औरंगजेब के दक्षिण चले जाने पर मथुरा के आस पास लूटमार प्रारम्भ कर दी थी। भावसिंह के तीन पुत्र हुए किन्तु सूदन ने केवल एक पुत्र का नामोल्लख किया है। उनका नाम नरेन्द्र बदनसिंह है जिसको कवि सर्वत्र बदनेश कहकर सम्बोधित करता है। यही बदनसिंह हमारे चरित्र नायक, जाट-कुल-भूषण सूरजमल के पूज्य पिता हैं। सूरजमल के प्रताप-सिंह नाम का एक सहोदर भाई और था जो बाजीराव के साथ युद्ध करता हुआ वीरगति को प्राप्त हो गया था। सूदन ने इन्हीं सूरजमल का सुजान-चरित्र में चित्र अङ्कित किया है।

जाट पहले तो सेना में नौकरी करते रहे किन्तु औरङ्गजेब के पश्चात राज्य सत्ता के सूत्रों के शिथिल होते ही इन्होंने अपनी वैभव-वृद्धि की भरसक चेष्टा की और उस ध्येय की सिद्धि इस समुदाय के नेताओं को लूटमार ही में दिखाई पड़ी अतः कुछ काल तक खूब लूटमार की गई। आगरे के ताजमहल और सिकन्दरे की इमारतों के सम्बन्ध से इनकी यह लूट इतिहास में और भी अधिक प्रसिद्ध हो गई है क्योंकि ऐसा प्रसिद्ध है कि सिकन्दरे के मकबरे से अकबर की हड्डिया खुदवा कर अलग फिकवा दी गईं और ताजमहल के दरवाजे आदि तोड़ डाले गये। इस लूटमार के रोकने का प्रयत्न दिल्ली के कठपुतली बादशाहों द्वारा भरसक किया गया और किसी अंश तक उन्हें अपने इस कार्य में सफलता भी मिली किन्तु जाटों की वाञ्छित वस्तु परि गणन और वैभवादि उन्हें भी किसी अंश में प्राप्त हो ही गये। जब दिल्ली के

राज सिंहासन के लिए आये दिन राजघराने में युद्ध होने लगे तो जाट नेताओं को पराजित व्यक्ति की सेना को लूट कर उनके सामान से उन्हें हलका कर देने के सुअवसर अधिक हाथ आने लगे। अन्ततोगत्वा सूरजमल तक आते आते उनकी परिगणना भरतपुर के जाट राजाओं के नाम से होने लगी जिनकी ओर दिल्ली के सम्राट् भी सहायता की अपेक्षा से देखने लगे।

जयपुर के राजा जयसिंह ने बदनसिंह को जाटों का राज्य दिलवाने में सहायता की थी जिसका उल्लेख कवि ने एक सोरठे में ईश्वरसिंह के मुख से कराया है। महाराज बदनसिंहजी ने ही भरतपुर का इतिहास-प्रसिद्ध किला निर्माण कराया था। जनरल लेक की सेना और उसकी बहुमुखी राजनैतिक चालें भी दुर्ग पर विजय पाने में असमर्थ रहीं थी। महाराज बदनसिंह बहुत दिन तक राज्य का कार्य सँभालते रहे किन्तु जब उनकी दृष्टि कम हो गई तो उन्होंने राज्य भार अपने योग्य और पितृ-भक्त पुत्र सूरजमल को सौंप दिया और आपने एकान्तवास करते हुए सं० १८१२ में परलोक गमन किया। पिता के मरने के समय तक ही सूरजमल ने वे प्रसिद्ध सात युद्ध लड़े जिनका वर्णन सूदन ने सुजान-चरित्र नामक ग्रन्थ में किया है जिनका सारांश कथा रूप में अन्यत्र दिया गया है।

सूरजमल के चरित्र में वीरोचित पराक्रम, युद्ध-प्रियता और उत्साह आदि गुण अधिक मात्रा में उपस्थित हैं जिनका वर्णन भी कवि ने असाधारण रूप में किया है। इन्हीं गुणों के फल स्वरूप ही यौवन काल ही में मेवात, और मालवा को जीत कर सूरजमल ने पिता के हृदय में अधिकार पाया था और उसके पश्चात् सवाई जयसिंह द्वारा किये गये उपकारों का बदला उसके पुत्र ईश्वरसिंह की रक्षा करके चुकाया था। पुनः दिल्ली में जा कर अकबरशाह को बादशाह बनाया

था। कवि सूदन ने घनाक्षरी के एक चरण ही में सूरजमल के प्रचंड पराक्रम का वर्णन कर दिया है :—

> दिल्ली दल दट्टन सुकट्टन मलेच्छ वंस,
> देस देस जाहर प्रचंड तेग सूजा की।

दिल्ली के नाम लेने से कवि का तात्पर्य यह है कि जो दिल्ली चक्रवर्ती राज्य की राज्य-लक्ष्मी का अधिष्ठान है उसी दिल्ली के दलों को सूरजमल की प्रचंड तलवार काट कर नष्ट भ्रष्ट कर देती है। सुजानसिंह को यदि कहीं से रण निमंत्रण मिल जाता है तो उनको अपार हर्ष होता है क्योंकि **'सब भाँति चैन दिन रैन सुख, पै न परति कल बिना रन'** उनको राजसी सुख अच्छा नहीं लगता है; सुन्दर सरोवरों में जल विहार से तो कहीं अधिक रण विहार उनको सुखकर है। माधौसिंह जयपुर पर आक्रमण कर देता है तो ईश्वरसिंह बदनसिंह के पास सहायता माँगने के लिए पत्र भेजते हैं। उधर पत्र के पहुँचते ही सूरजमल पिता के मुख से **'थाँभि ढुँढ़ाहर देस'** का आदेश सुनकर अत्यन्त प्रसन्न होते हैं।

**'यह सुनि कै सूजा पितु पग पूजा हरषानी सब देह।'** से कवि ने नायक की युद्ध प्रियता का परिचय दिया है। सूरजमल के पराक्रम के आतंक का वर्णन एक छप्पय छन्द में कवि ने किया है जिसको हम नीचे उद्धृत करते हैं :—

> 'पूरब परिय पुकार भूमि दिगपालन छंडिय।
> पच्छिम तच्छिन गच्छि जमन ग्रह खलमल मंडिय॥
> उत्तर सकल उदास त्रास तें ग्रास न भावै।
> दच्छिन परयो भगान कहत सूरज कहुँ आवै॥
> आतंक मानि दब्बे दुवन देव दिगीसनु सुख बढ़्यौ।
> ब्रज चक्रवर्ति बदनेस-सुत श्री सुजान जब्बहिं चढ़्यौ॥

इस छन्द से कवि ने यह कह दिया है कि सूरजमल के आतंक से दिक्पालों और चारों दिशाओं में खलभली मँच जाती है; चारों ओर भगादड़ फैल जाती है; और शत्रु सूरज के आतंक से चुप हो जाते हैं। नायक के पराक्रम, वीरता और उत्साह आदि गुणों का समर्थन करने वाले पद्य ग्रन्थ से अनेकों उद्धृत किये जा सकते हैं। पूरा ग्रन्थ ही वीर रस पूर्ण है और वीर रस भी सूरजमल की शक्ति से ही परिपक्व होने वाला वीर रस है। ग्रन्थ में वर्णित युद्धों में विजय लाभ करना, दिल्ली और दक्खिनी दलों को परास्त करना—जो कि तत्कालीन सुसंगठित दल थे—तो एक ऐतिहासिक सत्य है अतः कवि अत्युक्ति के दोष से सदा मुक्त है।

दूसरा गुण जो सूरजमल के चरित्र हार में उज्वल मुक्तावत् प्रकाशित है वह उनका पितृ-प्रेम है। यह एक ऐसा गुण है कि जो सर्व साधारण के हृदय को मुग्ध करने में समर्थ है। सूरजमल तो बिना पिता की आज्ञा के कोई काम करना जानते ही नहीं। वे छोटी से छोटी बातों में भी पिता की आज्ञा की प्रतीक्षा करते हैं और युवराज होते हुए भी कभी भी निरंकुशता का परिचय नहीं देते। राजाओं में और विशेष कर युवराजों के लिये तो यह एक गुण ही सम्पूर्ण गुणों का उद्भव स्थान है। प्रजा तो सर्वदा राजा के चरित्र का ही अनुकरण करती है। राजमार्ग ही प्रजा के लिए आदर्श मार्ग हुआ करता है इतिहास इस बात का साक्षी है। उनके इस गुण के समर्थन के लिए कुछ पद्य यहाँ दिये जाते हैं :—

अनुगतिः—हैं बदनसिंह महेन्द्र महि पर धम्म धुरंधर धीर।
नाको कुँवार सुजानसिंह सुकरै पर-उर पीर॥
जिन जीनि वसुधा नीनि सों कहुँ भीनि राखी नाहिं।
इक प्रीनि श्रीहरदेव की कै पिना के पद माहिं॥

सत्य है आज्ञाकारी पुत्र के लिए पिता और परमात्मा में कोई भेद नहीं है।

कूर्म नृपति ईश्वरसिंह की सहायता कर और दक्खिनी दल का दलन कर सूरजमल जिस उत्कण्ठा से भरतपुर को लौटते हैं वह उनके पितृ-प्रेम को पूर्णतया प्रकट करती है।

सो०—फिर आए निजु गेह सहित नेह सब देह सों
जैसे भावतु मेंह बहुत काल सूखा भएँ॥
दो०—पग भेंटे बदनेस के सूरज मन वच काइ।
तब उठाइ सिर सूँघि कैं लीन्हों कण्ठ लगाइ॥
तब सूरज कर जौरिकै कहे जुद्ध बिरतंत।
महाराज परिताप तैं करि आए अरि अंत॥
लिखि भेज्यो मनसूर ने दीन वचन महाराज॥
सुनि ब्रजेस आज्ञा दई करनौ याकौ संग॥
आयसु लै बदनेस को सुभ दिन कियो पयान॥
( तृतीय जंग )

और भी—

दो०……कतै अली कौं कोल में तब ही दियो पठाय।
आप आइ निज गढ़न में देखे पितु के पाय॥
सदन सदन आनंद भये बदन बदन कें फूल।
सुत सुजान के बिरद गुन सुनत श्रवण सुखमूल॥

आज्ञाकारी पुत्र के गुणों पर कौनसा पिता प्रसन्न नहीं होता। सूरजमल की आज्ञाकारिता के कारण पिता पुत्र में दशरथ और राम का सा प्रेम दृष्टिगोचर होता है। सूरजमल में सचमुच राम की सी ही पितृ-भक्ति है।

तीसरा गुण जो सूरजमल में अन्य गुणों से कम देदीप्यमान नहीं

है वह उनकी शरणागतवत्सलता है। जो व्यक्ति भी—चाहे किसी समय वह भरतपुर का शत्रु ही क्यों न रहा हो—महाराज की शरण आया उसी को अभयदान मिला। इस अभयदान के कारण ही सूरज को सातों युद्ध लड़ने पड़े थे। उनमें से एक युद्ध में भी अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए रक्त नहीं बहाया गया है। जब जिसने आर्त बनकर पुकारा कि महाराज के हृदय मे दया-पयस्विनी उमड़ पड़ी और शरणागत को अभय दे डाला। कोई यह न समझें कि उनको अपने पराक्रम और पौरुष का गर्व था इसीलिए वह सबसे उलझते और लड़ते फिरे; किन्तु बात तो इसके बिलकुल विपरीत है। वे प्रथम तो अन्याचारी को समझाते हैं यदि समझाने पर नहीं मानता तो फिर दण्ड शिक्षा देने के लिए अपना सब कुछ दाँव पर लगा देते हैं।

थासहरे के राव के छल से क्रुद्ध हो कर सूरज के ये वचन विचार करने योग्य हैं।

**दो०—बदी करै तासों बदी करत दोसु नहिं होइ।**
**अब याकौ हौं मारिहौं होनी होइ सु होइ॥**

'**अब याकौ हौं मारिहौं**' में गर्व नहीं किन्तु वीरोचित स्वाभिमान प्रकट हो रहा है। महाराज ने कभी भी शरणागत की रक्षा से स्वयं लाभ नहीं उठाया है यह ,उनका स्वार्थत्याग ही है। इस शरणागत वत्सलता के साथ साथ रण कौशल, नीति निपुणता और गुण-ग्राहकता आदि गुण भी चिपटे हुए हैं जिसके उदाहरण चरित्र ग्रन्थ में यत्र तत्र मिल सकते हैं।

सूरजमल का चरित्र एक आदर्श चरित्र है। हिन्दुओं के बुझते हुए वैभव की अन्तिम छटा उनमें दीख पड़ती है। एक महाकाव्य के चरित-नायक होने के सम्पूर्ण गुण उनमें विद्यमान हैं। वे जाति के प्राण और देश के सर्वस्व हैं।

---

# कथा का सार

जिस यादव-कुल में दैत्य-कुल-विध्वंसक, द्रौपदी-दीना-नाथ, देवकी-नन्दन, दशावतार शिरोमणि तथा यशोदानन्द के आनन्द स्वयं श्रीकृष्णजी ने जन्म लिया था उसी कुल में कालान्तर में भूरेसिंह का जन्म हुआ। इनसे आठवी पीढ़ी में जा कर भरतपुर के इतिहास प्रसिद्ध-दुर्ग के निर्माण-कर्त्ता महाराज बदनसिंहजी उदय हुए। संवत् १८१२ में एकान्तवास की अवस्था में आपका स्वर्गवास हो गया। महाराज बदनसिंहजी को सुयोग्य सुजानसिंह पुत्र रूप में प्राप्त हुए। श्रीसुजानसिंह (सूरजमल) ने अपने पिता के जीवनकाल में सात युद्ध किये जिनका क्रमशः वर्णन कवि ने इस ग्रन्थ में किया है। इन सातों जंगों का कथा-सार नीचे दिया जाता है।

## ( प्रथम जंग )

सं० १८०२ में अगहन मास में सूरजमल यमुना तट पर आखेट करने गए थे। वहाँ सावितखाँ के पुत्र फतेहअलीखाँ ने असदखाँ के विरुद्ध सहायता माँगने के लिए अपना दूत भेजा; किन्तु सूरजमल ने उसको स्वयं आ कर मिलने के लिए कहला भेजा। जब उसने स्वयं आर्त बन कर सहायता माँगी तो सूरजमल उसकी सहायता करने के लिए कोल होते हुए ससैन्य चण्डौस आए। अन्त में दोनों सेनाओं में घोर युद्ध हुआ जिसमें असदखाँ गोली लगने से मारा गया और उसकी सेना परास्त हो कर भाग गई। शरणागत फतेहअलीखाँ को कोल भेज कर स्वयं भरतपुर लौट आए।

## ( द्वितीय जंग )

सवाई राजा जयसिंह के पुत्र ईश्वर सिंह के राज्य पर उनके छोटे भाई माधोसिंहजी द्वारा उभाड़े जाने पर मराठों ने चढ़ाई कर दी। ईश्वरसिंह ने बदनसिंहजी के पास सहायता माँगने के लिए पत्र भेजा।

पिता की आज्ञा पा कर सूरजमल संवत् १८०४ के श्रावण महीने में अपनी चुनी हुई सेना लेकर कुंभेर से रवाना हो कर जयपुर पहुँचे। ईश्वरसिंह ने आपका बड़ा स्वागत किया। यहाँ से दोनों सेनाओं ने मिलकर मराठों को मोती डूँगरी के युद्ध में परास्त किया और बगरू महल की ओर भगा दिया। ये सेनाएँ फिर वहाँ भी पहुँच गईं और अचानक मराठों की सेना पर धावा कर दिया गया। इस युद्ध के साथ साथ कई और युद्धों में परास्त हो कर मल्हारराव ने संधि का प्रस्ताव किया। माधोसिंह को दो परगने दिलवा कर मराठे अपने देश को लौट गए और सूरजमल बड़ी उत्कण्ठापूर्वक पिता के पास भरतपुर वापिस आ गये।

**( तृतीय जंग )**

संवत् १८०५ के पूस मास के शुक्ल पक्ष में सूरजमल को समाचार मिला कि सलावतखाँ बख्शी ने भारी सेना के साथ उसके देश पर आक्रमण करने के इरादे से दिल्ली से प्रस्थान कर दिया है तो वह भी अपनी सेना सुसज्जित कर के उसकी अगवानी करने के निमित आगे बढ़े और मेवात के नौगाँव में डेरा डाला। वहाँ से अपनी चुनी हुई छः सहस्र सवार सेना साथ ले कर पंद्रह कोस आगे बढ़े और वहाँ ठहर कर अपनी सेना को पाँच टुकड़ियों में विभाजित किया। उसके बाद अपने विश्वासपात्र सरदारों की अधीनता में बख्शी की सेना के चारों ओर चौकियाँ स्थापित कर दीं जिससे बख्शी की सेना को एक मजबूत दुर्ग के भीतर बन्द कर दिया। युद्ध में सलावतखाँ परास्त हुआ और उसके दो प्रसिद्ध सरदार रुस्तमखाँ और हकीमखाँ इस युद्ध में काम आए। तब सब ओर से निराश हो कर सलावतखाँ ने संधि का प्रस्ताव किया जिसको सूरज ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। दोनों में जब सन्धि हो गई तो सूरजमल अपने पुत्र जवाहरसिंह के साथ जो इस युद्ध में साथ था घर वापिस लौट आए और उसका विवाह मथुरा ने किया।

( चतुर्थ जंग )

संवत् १८०६ में भाद्रपद मास में सूरजमल ने वजीर सफ़दरजंग की सहायता कर पठानों का दर्प चूर्ण किया। (बादशाह के कथनानुसार सफ़दरजंग ने अफ़ग़ानों के कुल राज पर अधिकार कर लिया और इसके प्रबन्ध का भार राजा नवलराय को दे दिया। अहमदखाँ ने नवलराय को युद्ध में परास्त किया और वे उस युद्ध में मारे गये)। जब नवलराय की मृत्यु का समाचार दिल्ली पहुँचा तो सफ़दरजंग ने क्रुद्ध हो कर अहमदशाह से अहमदखाँ पर आक्रमण करने की अनुमति मांगी। आज्ञा मिलने पर उन पर आक्रमण कर दिया गया और दयानाथ राजदूत को सूरजमल के पास सहायतार्थ बुलाने के लिये भेजा। सुजानसिंह ससैन्य कोल पहुँचे जहाँ वजीर पहिले डेरा डाले पड़ा था। मनसूर वजीर ने इसमाइलखाँ को सूरजमल से मिलने को भेजा और दरबार आम में सूरज का स्वागत किया। दूसरे दिन वजीर भी महाराज के डेरे पर उपस्थित हुआ और मन्त्रणा करके यह निश्चित किया कि सुजानसिंह भरतपुर से थोड़ी सी सेना और बुलावें। मन्त्रणा के अनुसार सुजानसिंह जी ने अपने पिता को सेना भेजने के लिए पत्र लिख दिया। किन्तु सेना आने से पूर्व ही दोनों सेनायें कूँच कर कासगंज पहुँच गईं और कुछ दिन वहाँ विश्राम करके नौलखा पर अधिकार कर लिया और वहीं पर डेरा डाल दिया। उधर दोनों सेनायें नौलखा में डटी हुई थीं और मनसूर ने व्यूह रचना कर डाली। उधर अहमदखाँ पठान ने पठानों की सेना एकत्र कर और दस सहस्र रुहेलों की सहायक सेना ले कर पाँच कोस के फासले पर गंगा की कछार में अपना मोरचा जमाया। अहमदखाँ ने भेदनीति का आश्रय ले कर सूरज को अपनी ओर मिलाने की चेष्टा की किन्तु असफल रहा। उधर सूरज ने मनसूर से युद्ध के लिये सन्नद्ध होने को कहा। युद्ध आरम्भ हुआ। रुस्तमखाँ पठान और सूरज से कठिन लड़ाई हुई जिसमें रुस्तमखाँ वीरगति को

प्राप्त हुआ; किन्तु मनसूर ईमाम्वां पठान से परास्त हो कर दिल्ली को भाग गया। इसके बाद सुजानसिंह भी अपनी आने वाली सेना से गैंद्ध में मिल कर स्वदेश वापिस लौट आये।

नवाब सफदर जंग ने दिल्ली पहुँच कर मल्हारराव होलकर को सहायतार्थ बुलाया। मल्हारराव पचास हजार सवार साथ ले कर आ पहुँचे। नवाब ने सुजानसिंह और मल्हाराव की सहायता ले कर अहमद खां पर फिर आक्रमण किया। पठानों ने परास्त हो कर मल्हारराव को बीच में करके सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार मल्हारराव, मनसूर और पठानों में भूमि के तीन बराबर भाग कर दिये; किन्तु सुजानसिंह निस्वार्थ भावना से शरणागत की रक्षा कर स्वदेश वापिस आ गये।

**( पञ्चम जंग )**

संवत् १८०६ में सुजानसिंह ने सफदर जंग के मंतव्यानुसार बादशाह की आज्ञा पाते ही घासेहेर के राव बहादुर सिंह पर चढ़ाई कर दी। पुत्र जवाहर सिंह भी सेना ले कर अपने पिता सुजानसिंह से आ मिला। दोनों विरोधी दलों में युद्ध हुआ जिसमें राव परास्त हुआ, और दुर्ग के अन्दर चला गया। जब सरदारों ने राव पर सन्धि करने के लिए जोर डाला तो उसने जालिमसिंह को सुजानसिंह के पास सन्धि समाचार ले कर भेजा। जालिमसिंह ने दस लाख रुपया और सम्पूर्ण तोप, रहकला ले कर युद्ध को बन्द कर देने की शर्त पर सुजानसिंह को राजी कर लिया। किन्तु राव ने जालिम सिंह की बात को जब स्वीकार नहीं किया तो उसने आत्महत्या कर प्राण दिये। सुजान सिंह ने अमर सिंह को इस सब का भेद लेने के लिए दुर्ग के अन्दर भेजा। राव ने छल कर के सम्पूर्ण सामान अपने पुत्र के पास दिल्ली भेज दिया। तब तो सुजानसिंह के क्रोध का वारापार न रहा और अपनी सेना को प्रातः-काल ही इशारा पाते आक्रमण कर देने की आज्ञा दी। राव पर सन्धि करने के लिए बहुत जोर डाला गया किन्तु जब उसने न माना तो

बहुत से नागरिक सुजान सिंह की शरण में आ गये। राव अपने थोड़े से साथियों को साथ ले कर दुर्ग से बाहर निकला और युद्ध करते करते मारा गया। इस प्रकार घासहरे का दुर्ग जीत लिया गया।

( षष्ठ जंग )

संवत् १८१० के चैत्र मास में सुजान सिंह ने वजीर मनसूर के लिए दिल्ली पर आक्रमण किया। कवि ने चढ़ाई का वर्णन करने से पूर्व दिल्ली के इतिहास को शांतनु नृप से ले कर अहमदशाह तक के बादशाहों का नाम तथा राज्यकाल आदि के रूप में लिखा है। इसमें शांतनु से ले कर जनमेजय तक का वृत्तान्त चौहान वंशीय पृथ्वीराज और मुहम्मदगौरी के युद्धों का उल्लेख और पठानों के सौ वर्ष राज्य का उल्लेख करके तैमूरलंग से ले कर तत्कालीन राजा तक वर्णन है। अहमदशाह के वजीर सफदरजंग और बख्शी गाजीउद्दीनखाँ में मनोमालिन्य था। एक बार बख्शी गाजीउद्दीनखाँ ने सफदरजंग के विरुद्ध बादशाह के कान भर के उसको दिल्ली से निकलवा दिया। घासहरे का दुर्ग जीता जा चुका था। वजीर ने क्रुद्ध हो कर सुजानसिंह को दिल्ली बुला कर सम्पूर्ण हाल कहा। सुजानसिंह ने राज सिंहासन के विरुद्ध हथियार उठाने से इनकार किया और सेना की संख्या भी अपर्याप्त बताई। किन्तु मन्त्रणा के पश्चात् सुजानसिंह की सम्मति से औरंगजेब के बेटे कामबख्श के नाती को बुला कर अकबरशाह की पदवी सहित बादशाह बनाया। युद्ध हुआ और लड़ते-लड़ते सुजानसिंह ने लाल दर्वाजा तोड़ डाला। उसके बाद दिल्ली को वजीर और सुजानसिंह के सिपाहियों ने खूब लूटा। कवि ने इस लूट के वर्णन में पशु-पक्षी, शस्त्र, बर्तन, बाजा, आभूषण, कपड़ा, मिठाई आदि अनेक वस्तुओं के नाम का एक छन्दमय कोश बना डाला है।

इस लूट के बाद फिर युद्ध हुआ। यह युद्ध दिल्ली और यमुना के बीच कोटरा में हुआ था। इस युद्ध में राजेन्द्रगिरि नाम का एक नवाब

का सेनापति मारा गया। इस दुर्ग के तोपखाने से जन-हानि अधिक हुई अतः सुजानसिंह ने सेना हटा ली। नवाब ने उमरावगिरि और अनूपगिरि को सेनापति बनाया। लड़ाई बड़ी घमासान हुई किन्तु दुर्ग न टूट सका। सूरजमल और वजोर की सेनायें तिलपत्ति की ओर चल दीं और वहाँ पहुँच भी गईं। गाजीउद्दीन खाँ ने बादशाह की आज्ञा ले कर इनका पीछा किया किन्तु गढ़ी के युद्ध में सुजानसिंह द्वारा परास्त होकर दिल्ली वापिस आ गया।

कुछ दिन आराम कर वजीर और सुजानसिंह फिर दिल्ली पर, चढ़े। दिल्ली की सेना लड़ने से लिए बाहर आई किन्तु हार कर भीतर घुस गई। सुजानसिंह ने सेना को बाहर निकालने के निमित्त अपनी सेना को कूच की आज्ञा दे दी। इस समाचार को सुन कर गाजीउद्दीन बीस हजार सवार और तोपखाना ले कर युद्ध के लिए चला; दिल्ली से आठ कोस के फासले पर युद्ध हुआ जिसमें गाजीउद्दीन परास्त हो कर फिर दिल्ली लौट गया। दिल्ली पहुँच कर जयपुर के राजा माधोसिंह और मराठों को सहायतार्थ बुला भेजा। सुजानसिंह ने फरीदाबाद में डेरा डाले पड़ी हुई बादशाही सेना पर धावा बोल दिया और उसे पूर्णतया परास्त कर भगा दिया। माधोसिंह ने दोनों दलों में सन्धि करा दी और सुजानसिंह के साथ स्वदेश लौट आए।

**( सप्तम जंग )**

गाजीउद्दीनखाँ ने सुजानसिंह को दण्ड देने का निश्चय किया क्योंकि उसने वजीर को उसके विरुद्ध सहायता दी थी। गाजीउद्दीनखाँ द्वारा भड़काए जाने पर मल्हारराव ने भरतपुर पर चढ़ाई कर दी। सुजानसिंह ने रूपराम को मराठों के पास उनका भेद लेने को भेजा था। मल्हारराव उस समय जयपुर में डटा हुआ था। मल्हारराव ने दो करोड़ रुपये माँगे। रूपराम ने उनकी सेना की संख्या और बल्लभगढ़ के दुर्गाध्यक्ष बल्लू चौधरी के धोखे से महमूद आकवत द्वारा मारे जाने

का समाचार सुजानसिंह के पास भेजा। सुजानसिंह ने अपने पुत्र जवाहरसिंह को सेना ले कर बरसाने भेजा। रूपराम ने दो करोड़ के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और व्रज की शोभा तथा कृष्ण-लीला का वर्णन मल्हारराव को सुनाया।

मल्हारराव का पुत्र खंडेराव मेवात को लूटता हुआ पहले से ही व्रज में पहुँच चुका था। किन्तु मल्हारराव और सुजानसिंह दोनों ही ने अपने अपने पुत्रों को युद्ध न करने की आज्ञा भेज दी। दीघ के दुर्ग में सुजानसिंह ने जाटों की एक सभा की और उनकी अनुमति ले कर युद्ध की तैयारी कर दी। अपने दुर्गों को दृढ़ किया गया; गोला और बारूद तथा भोजन की सामग्री एकत्रित की गई। उधर मल्हारराव ने जयपुर से साठ सहस्र सेना सहित कूच कर दिया। दो दिन की यात्रा के पश्चात् पुरोहित रूपराम को फिर बुलाया और रूपराम को इसकी दसगुनी सेना कर देने का आतंक दिखाया। रूपराम ने श्रीकृष्ण द्वारा काल यवन के जिसके पास असंख्य सेना थी परास्त किये जाने की कथा कह सुनाई। इससे उसका यह तात्पर्य था कि आपकी असंख्य सेना व्रजाधिप सुजानसिंह को परास्त नहीं कर सकती किन्तु आपकी काल यवन की सी अवस्था होगी। ग्रन्थ का वर्णन मुचकुन्द की नेत्र-ज्वाला से कालयवन के जल कर भस्म हो जाने पर समाप्त होता है।

ग्रन्थ का वर्णन अधूरा है। ज्ञात होता है कि कवि इस समय ग्रन्थ को अधूरा छोड़ कर दुनियाँ से चल बसे। इस युद्ध में सुजान और मराठों की सन्धि हो गई। संवत् १८२१ में सुजानसिंह युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। उनके बाद उनके बड़े पुत्र जवाहरसिंह भरतपुर की गद्दी पर बैठे।

---

# सूदन-रत्नावली

छप्पय—प्रनत गिरा गिरि ईस गवरि गौरी गिरिधारन ।
गोकर गायत्री सुगोधरन तिय गोहारन ॥
गंग गाय गोमती गलौ ग्रहपति अरु सुरगिरि ।
गध्रपेस गीर्वानु गुह्यपति गंधवाह गुर ॥
गन गुडाकेस गांगेयहू गगनचरहु सुनि लिज्जियै ।
कर जोरि प्रनति सूदन करत इक ग्रह गोपति किज्जियै ॥१॥

दो०—ज्यौं ज्यौं कलि उद्धत भयौ त्यौं त्यौं घटि गई बुद्ध ।
अब के कवि भाषा कहत तऊ न समझत सुद्ध ॥२॥

इसके पश्तात् कवि अपने अनेक अनेक पूर्ववर्ती कवियों को प्रणाम करता है ।

सो०—मथुरापुर सुभधाम, माथुर कुल उत्पत्ति वर ।
पिता वसंत सुनाम, सूदन जानहु सकल कवि ॥३॥

कवित्त—अदिति असोक भरी सोक भरी दिति और,
दोप भरी पूतना अदोप करी ओपिका ।
कंस हिये भौ भरी अभौ भरी अंध बंस
पंडव कैं कीरति अकीरति की लोपिका ॥

लाज भरी द्रोपदी सुराज भरी व्रजभूमि
कूबरी इलाज सो अवाज करी कोपिका।
देवकी अनन्द भरी ऊगों व्रजचन्द घरी
भाग भरी जसुदा सुहाग भरी गोपिका ॥४॥

अनुगीत – तिहिं वंस में परसस लाइक नृपनु के अवतंस।
अरि कंस लौं निरवस कीने तपत नभ ज्यों हंस॥
जग उदित उद्धत जदुकुलनु में भयौ भूरे भूप।
ताकौ भयौ सुत रौरिया सो रौरि ही के रूप॥
वह रौरिया अरि रौरिया रनवस में उद्योत।
परताप मेंटन भौ पचै परताप को सो गोत॥
तिहिं पचै कै सुन्दर सचे ताके मदू महिपाल।
मदु मर्दनौं महि के महीपनु साहि कौ उर साल॥
ताकें भये प्रथिराज सुत प्रथिराज के परवान।
पहिले प्रथीपति नाम दीनो पैज करि भगवान॥
पुनि भयौ मकनि भुवाल भूपह भय विनासन जोग।
जिन कियौ ससिकुल प्रगट भू पर निखिल वसुधा भोग॥
सुत भयौ तिनकैं खानचन्द अमंद चन्द समान।
तिन अपनी किरवान सौं वसु कियौ सकल जहान॥
व्रजराज तिनके ओर तौ व्रजराज के परताप।
जिनि साहि के दल गाहि कै निज साहिबी करि थाप॥
पुनि भयौ भूपति भावसिंह भुजान वल भरपूर।
रवि वंस में ज्यौं करनु त्यौं ससिवंस कौ वह सूर॥

ता भावसिंह भुवाल के वदनेस नाम नरेस ।
नहिं वा समान धनेसहू नखतेस और दिनेस ॥
हैं वदनसिंह महेन्द्र महि पर धर्म धुरंधर धीर ।
ताको कुँवार सुजानसिंह सुकरै पर-उर पीर ॥५॥

दो०—सबै वीर सब धीर अति, सबै सुधारन काज ।
हैं व्रजेस के पूत वहु, पै सुजान सिरताज ॥६॥

कवि०—पाँच कुरएस के महेस के उभय भये,
तैसेही दिनेस के सुएक है नितेस के ।
दोइ अलकेस के जदेस के प्रगट दोइ,
सूदन गनेस के यहै अँदेस सेस के ॥
काहू अमृतेस के कपेस के जलेसहू के,
राज काज पूरौ सूरौ सालतु दिगेस के ।
भूमि के नरेस के सुरेस के भयौ न होइ,
जैसा भयौ सूरज व्रजेस वदनेस के ॥७॥

दो०—हुकुम मानि वदनेस कौ, सूरजमल्ल कुँवार ।
प्रथम मारि मेवात कौं कियौ आप अधिकार ॥८॥
पुनि माढ़ौ गढ़ मालुवै, जीत्यो सिंह सुजान ।
कूरम की रच्छा करी, निज कर गहि किरवान ॥९॥
पुनि कूरम सौं विरझियौ छोड़त देखि मरजाद ।
वचन जीत तासौं भयौ सूरज आपु जवाद ॥१०॥

हरगीत-भूपाल पालत्र भूमिपति वदनेस नंद सुजान हैं ।

ताको चरित्र कछूक सूदन कह्यौ छन्द बनाइ के।
कहिदेव ध्यान कवीस नृप-कुल प्रथम अंक सुनाइकै ॥११

इति प्रथम अङ्क

दो०—ठारै सैरु दुहोतरा अगहन मास सुजान।
बैठि सजल गोहि कै किय आखेट-विधान ॥१॥

छप्पय—कालिन्दी तट दुग्ग उग्ग सरवर मन मोहत।
जलचर जलज अनेक तहाँ खग मृग बहु सोहत ॥
करतु सरस जलकेलि कभू मीनहिं गहि लावतु।
कबहूँ ह्वै असवार धाइ उद्धारु धुकावतु ॥
इहि भाँति रमत आखेट बदन-पूत मजबूत मन।
सब भाँति चैन दिन रैन सुख पै न परति कल बिना रन ॥२

दो०—एक दिवस दरबार करि बैठ्यौ सिंह सुजान।
आस पास भूपतिनु के बैठे तनय अमान ॥३॥

रोला—ज्यौं पारस के बीच बिना आरस, रवि दरसै।
उडुगन सहित मयंक सरद पूरन दुति सरसै ॥
ज्यों गयंद गन मद्धि महा जूथप मद बरसै।
सुरपति ज्यौं सुरसभा इती उपमा जा परसै ॥
पौरि खड़े प्रतिहार रजत आसा चमकावत।
राइरान, नृप, खान, तहाँ सनमानहिं पावत ॥
तिनकै वाजि दराज द्वार गजराज विराजत।
पाइक अरु पालकी सहस-सहसनुही छाजत ॥
तुरकी, ताजी, कुही, देस खंधारी वलकी।
अरबी ऐराखी रु पर्वती कच्छी थलकी ॥

नौने मौने नैन कान सोहत लघु चंचल।
जिनके रूपहिं देखि रहत फरकत जनु अंचल।।
जिनकी चाल विलोकि चाल चुकि जात जु मनकी।
को कुरंग खगराइ तात्र नहिं पवन गवन की ।।४।।

कवित्त—दंतन सौं दिग्गज दुरंतर दबाइ दीने,
दीपति दराजु चारु घंटन के नद हैं।
सुंडनि झपट्टि कैं उलट्टत उदग्गगिरि,
पट्टत सुसद बल किंमत विहद हैं।।
सूदन भनत सिंह सूरज तुम्हारे द्वार,
झूमत रहत सदा ऊँचे बहु कद हैं।
रद करि कज्जल जलद से समद रूप,
सोहत दुरद जे परदल दलद हैं ।।५।।

छप्पय—यों गज बाजि अपार द्वार दरबार मद्धि नर।
ज्यौं जयन्त सुरकत-तनय अरि अंत करन वर।।
तिहीं बार इक मीर आइकैं खबर कराइय।
साबितखाँ-सुत मोहिं कुंवर के पास पठाइय।।
तब करि सलाम प्रतिहार ने दूत वचन जाहर कर्‌यौ।
जहँ नर सुजान मरदान मुख भट समूह उदभट भर्‌यौ

सो०—तब तो वकील कर जोरि, अरज करी कछु अरज की।
तब सुजान दृग मोरि, मसलति की सारति करी ।।७।।

हरगीतिका-यह सुनि सँदेस सुजान चुल्लिय मनहुँ फुल्लिय कंज है
हमसों नबाबु न सांचु राखत करत खातर रंज है ।।

तुम जाइ कहहु नवाब सों जौ साँचु राखत जीय में।
तौ एक बार मिलै हमैं नहि बात कहनी बीय में ॥८॥

दो०—ऐसे बचन सुजान के सुनि वकील सुखकान।
फिर बौल्यौ हित स्वामि कौं करत बहुत सनमान ॥९॥

भुजंगी—महाराज बदनेस भौ भाग पूरौ।
भयौ तासु के पूत पनपाल रूरौ ॥
रहै भूप सोई तिहारौ कहावै।
सबै सुक्ख पावै सरन ताकि आवै ॥
बसै बाँह की छाँह मैं छत्रधारी।
हिये साहि के साहि के संग पारी ॥
सबै राइरानैनु अवलंबु लीनौ।
कियौ खान सुलतान कौ मान हीनो ॥
जिसै पाल लीने महीपाल औरौ।
तिसै आपनौ नाम की ओर दौरौ ॥
करौ आपनो ही फतेहू अली कौ।
नहीं ढील कीजै बनै ज्यौं भली कौ ॥१०॥

दो०—रुखसत पाइ सुजान तें सो वकील सिरनाइ।
आयौ जहाँ फतेअली कही सुकही बनाइ ॥११॥
साइत सोधि सवार ह्वै करि सलाह सजि सैन।
सूरज हू आखेट मिस ईखू लयौ ससैन ॥१२॥
फतेअली आयौ उतै संग पाँच सै ज्वान।
जहाँ हुतो सूरजबली बदन पुत भवमान ॥१३॥

पवंगा—फिरि बदनेस कुँवार वियौसु फते अली।
बैठे इकले जाइ करन मसलति भली॥
घरी दोइ बतराइ दुहूँ के मन रले।
कौल बचन करि एक दोऊ डेरा चले॥ १४॥

इति द्वितीय अङ्क

दुपई—असदखान खानजादो हू ऐसे सुनि कै आयौ।
फतेअली रु कुँवर साहिब को ब्यौरौ बेगि पठायौ॥१॥
सुनतु तुरत महाराज कुँअर ने बकसी आपु बुलायौ।
तुम चंडौस जाहु नकदी लै मोको जानो आयौ॥२॥
हुकुम पाइकै श्रीसुजान कौ दलपति निज सिर नायौ।
बोलि नकीब कहो सरदारन तुरतै कूँच करायौ॥३
भले भले सरदार सूर मिलि तनक न देर लगायौ।
चारयौ बरन नरन में उद्धत निजु निजु पटह बजायौ॥४

दोहा—आयो मदति सुजान दलु, फतेअली सुनि कान।
कोस आठ चलें कोलतैं आयौ देतु निसान॥५॥
असदखान हूँ कूँच करि आयो कोस छ सात।
काहू की मानी नहीं समुझि बैर की बात॥६॥

कवित्त—उद्धत असदखान कुद्ध को निधान जान,
लेन उनमान फतेअली ने पठायौ दूत।
कहियौ नवाब सौं सलाम मैं भी हाजर हौं,
जानत न कौल दरपुस्त यह मेरा कूत॥
ईधर न आओ तौ मेहर फुरमाओ मुझे,
बन्दे हम साहि के हमेसा हमें तुम्हें सूत।

खातिर न आवै तो सुनाही वंदा वंदगी मैं,
मौला जिसै देहिगा रहैगा खेत मजबूत ॥७॥

सुनी दूत वानी महामानी खानजादे जब,
हिये अहटानी हैं रिसानी देह तासमैं।
दूत कौं बुलाय कही जाह तेरे आगा पास,
कोई रोज चाहे जान जाना तौ अवास मैं॥

मुझे आया जाने जीया मानें तौ ठिकाने रहि,
फजर की गजर बजाऊं तेरे पास मैं।
लाऊँ उसै रास मैं सभा समैं सवै सुनाइ,
तेग ही के त्रास में हुतास जैसे घास मैं॥८॥

दुमला

ऊतरु यह दैकै दूत पठै कै असदखान यह रोस भर्यौ।
बोल्यौ सब वीरन कुल के धीरन जिन न चरन रन उलटि धर्यौ॥
तुम करौ तयारी सब इस वारी में दिल यह इतकाद कर्यौ।
मुझको तो लरना देर न करना आइ साहि कौ काज पर्यौ॥९॥

दोहा—असदखान असवार ह्वै, जवहीं कियौ पयान।
फतेअली के चर तवै खवर करी यह आनि॥१०॥
तवहीं सिंह सुजान के हलकारा ने दौर॥
फतेअली सौं रारि है जो कछु करनी गौर॥११॥

पद्धरी

तवहीं सवार ह्वै कै सुजान। कलि भारथ को मनु भीमआन॥
चहुँ ओर घोर वज्जे निसान। गज्जे जलद मानौ भयान॥

फहरान धुजा मनु अंसमानु । कै तड़ित चहूँ दिस तरतरान ॥
सज्जे हयंद जे भरे सान । गज्जे सुभट्ट लै लै दवान ॥
गति धीर धीर वह चली सैन । रजरजित अस्वर अक्क ऐन ॥
डंका निनद्द छाये अहद्द । रनसिंह तूर बेहद्द सद्द ॥
यह फतेअली हू खबर पाइ । आयौ सहस्र द्वै हय बनाइ ॥
नौबत निसान बहुमान अग्ग । गज ऊपर बैठ्यौ धरि उमग्ग ॥
चारयौ निसान चारयौ दिसान । फहरावति आवति धरि धवान ॥
चढ़ि चार घटा असमान भान । सुत साबित खाँय अरु असदखान
दुहुँ दलन परस्पर भई दीठि । हथियार चमकि चहुँधा बसीठि ॥
छुट्टी जँजाल दुहुँधा कराल । बंदूकबान हयनाल जाल ॥
अरु लौह जभ जग्गो बिसाल । मनु गजतु घोर दुहुँ ओर काल ॥

इति तृतीय अंक ॥

छप्पय—मिलो परस्पर डीठि वीर परिगय रिस अग्गिय ।
जग्गिय जुद्ध विरुद्ध उद्ध पलचर खग खग्गिय ॥
भग्गिय सद्द सृगाल काल दै ताल उमग्गिय ।
लग्गिय प्रेत पिसाच पत्र जुग्गिनि लै नग्गिय ॥
रग्गिय सुरग्ग रंभादि गण रुद्र रहस आवज धमिय ।
सन्नाह करकि उच्छाह भट दुहुँ सिपाह जब झमझमिय ॥

कवित्त—अनी दोउ बनी घनी लोह कोह सनी धनी
धनुन की मनी बान बीतत निषंग में ।
हाथी हटि जात साथी संगन घिरात औन
भारती में न्हात गंग कीरति-तरंग में ॥

भानु की सुता सी कवि सूदन निकारी तेग
बाहत सराहत कराहत न अंग में।
वीर रस रंग में यौं आनंद उमंग में सो
पगु पगु प्राग होत जोधन कों जंग में ॥८॥

पद्धरी:—

धरि धरनि पाय धमकैत धीर। जहँ असदखान रन करिय बीर॥
सरसेल साँग समसेर चर्म। दुहुँ ओर सुभट किय घोर कर्म॥
इकदेत सीस परि खग्ग घाइ। विय लेत ढाल पर तिहिं बचाइ॥
इक साँग साँग संग्राम जुट्टि। वहु सेल सेल गए सीस फुट्टि॥
अरु किते वीर भाले तु भाल। जमडाढ़ काढ़ रन में कराल॥
इक चड हथ्थ को दण्ड संधि। तकि तीर देत तूनीर बंधि॥
इक खंजर पट्टे अरु दुधार। वज्जंत परस्पर करि उधार॥
तन फसत अमिन तउ धसत जात। छतजात जात तउ करत घात॥
चहुँ ओर भुसुंडिनु की अपार। अति अरध धुंधवर संतसार॥
ज्यौं असदखान आवतु रिसान त्यौं लगी आनि गोली भयान॥
वह लगत मान तजि प्रान सान। तजि या सरीर बैठ्यौ विमान॥

अरिल्ल—असदखान प्राननु करि वित्तिय।
निरखि सेन स्वामी नहिं रित्तिय॥
पट्टिय भूमि कट्टि नर बीरन।
हट्टिय निट्ठि पिट्ठि धर धीरन॥
सस्त्रन डारि डारि कोउ वस्त्रन।
कोऊ देखि देत मुख में त्रन॥
सूरज के सूरन गहि लुट्टिय।

सुरपुर कौं जैसिंह गए बीते बहुत दिनान।
हुतौ भूप आमेर कौ ईसुर सिंह अजान ॥३॥
तासौं दक्खिन के दलनु रोपी आनि सुजंग।
माधौसिंहहि संग लै दियो देस मैं दंग ॥४॥

सो०—देखि देस कौ चाल, ईसुर सिंह भुवालने।
पत्र लिख्यौ तिहि काल, बदनसिंह ब्रजपाल कौं ॥५॥

दोहा—करी काज जैसी करी, गरुड़ध्वज महाराज।
पत्र पुष्प के लेत ही त्यों आयौ ब्रजराज ॥६॥
तबहीं सिंह सुजान कौं बिदा कियौ बदनेस।
सुभ नछत्र रवि ससि भले सोधि मुहूरत बेस ॥७॥

छप्पय—दस हजार असवार सहस द्वै लै पदाति गन।
रथ गयंद हरदन्द जिते चहियत अपने मन॥
सहस दोइ बरछैत जे न कबहूँ मुख मोरत।
जुद्ध जुरैं जम रूप दंति के दंतनु तोरत॥
फहरें निसान भुवमान दुति कटि कृपान आपुन कसिय।
मंगल बिधान द्विज दान दै मंगल गज ऊपर लसिय॥
बज्जे पटह प्रचंड तूर भरपूर गरज्जिय।
भूरि भेरि भंकार दुवन भय भार लरज्जिय॥
सुनि दुंदुभि धुंकार धराधर धर धर बुल्लिय।
डिढ़न रहे डड्ढार बाघ वनचर वन डुल्लिय॥
हिंसत हयंद गज्जत करी रज उमंडि अंबर मढ़िय॥
मानहुँ उदोत गिरि सिखर तें सूरज सौ सूरज चढ़िय॥

किते त्रिप्र कसि धनुप जंग रंगनु के जेता।
किते रथनु असवार सुजस कीरति के देता॥
किते पुरान प्रवीन किते जोतिप के ज्ञाता।
किते वेदविधि निपुन किते सुमृतन के ज्ञाता॥
अप अपने कर्मनु में निपुन जयति जयति वानी रढ़े।
मघवान भान उपमान जब सैन साजि सूरज चढ़े॥१०॥

त्रिभंगी—केते मुगलाने सेख पठाने सैयद वाने बाँधि चढ़े।
काइथ खतरैटे लोह लपेटे देत चपेटे चाइ बढ़े॥
पाइक जे लाइक परदल घाइक लै धनु साइक लोह मढ़े।
कोलाहल बड्ढिय रविरज-मड्ढिय खल मन डड्ढिय देखि कढ़े॥११

छप्पय—पूरव परिय पुकार भूमि दिगपालन छंडिय।
पच्छिम तच्छिन गच्छि जमन ग्रह खलभल मंडिय॥
उत्तर सकल उदास त्रास तैं ग्रास न भावै।
दच्छिन परयो भगान कहत सूरज कहुँ आवै॥
आतंक मानि दुव्वे दुवन देव दिगीसनु सुख बढ़्यौ।
ब्रज-चक्रवर्ति बदनेस-सुत श्रीसुजान जव्वहिं चढ़्यौ॥१२

इति प्रथम अंक॥

दो०—प्रथम कूँच कुँभेर तैं करिके सिंह सुजान।
खान पान सैनहि दियौ बहुरयौ कियौ पयान॥१॥

दुपई—तीन कूँच अरु द्वै मुकाम में जाइ सु जैपुर लीनौ।
जाने खबर करी ता नर कों नरपति बहुधन दीनौ॥२॥

दो०—प्रथम ईसुरीसिंह ने मन्त्री दियौ पठाइ।
फेरि आपुही आइयौ सूरज पै चित चाइ ॥३॥
जथा जोग सनमान करि कीनों मन्त्र विचार।
ईसुर कही कि कुँवर जी हूजै आप अगार ॥४॥
आगे सिंह सुजान दलु पाछे कूरम भूप।
जुद्ध काल उद्धत भए धरे बीर रस रूप ॥५॥
उते बिकल दल दक्खिनो सनमुख पहुँचे आय।
जिनके त्रास न सोवहीं दिल्लीपति उमराय ॥६॥

छप्पय—क्रुद्ध जुद्ध के काज दुहूँ भट भए सनम्मुख।
सूरन के मुख नूर कायरनु सूखि गए मुख ॥
धरि धरि मुच्छनि हथ्थ सेलु सांगन पटतारत।
लोह जन्त्र जमडाढ़ बान किरचान सँभारत ॥
धरि अग्ग पग्ग फर मग्ग में खग्ग कढ़त जुग्गिन जग्गिय।
दुहुँ स्वामि-काम संग्राम में बीर बीररस में पग्गिय ॥७॥

त्रिभंगी—उथ्थौं मरहट्टे भाले पट्टे लै तै कट्टे सरपट्टे।
इथ्थौं ब्रजवासी जे बलरासी हुवे हुलासी भरपट्टे ॥
हय सौं हय जुट्टे नेकु न हुट्टे तेगौं कुट्टे सिर फुट्टे।
छोहैं। भरि छुट्टे कैसौं खुट्टे फुट्टक फुट्टे भुब लुट्टे ॥
फिरि फेरि झटक्कैं पकरि पटक्कैं साँग सटक्कैं मारु कहैं।
इक इक्क हटक्कैं देत दड़क्कैं सेल्ल लटक्कैं श्रोन बहैं ॥
बिन हथ्थ भटक्कैं भरत बटक्कैं मास गटक्कैं देखि रहैं।
इक जात पटक्कैं खग्ग खटक्कैं सीस कटक्कैं दौर गहैं ॥
पावैं नहिं जावैं भुजनि भुजावैं मुंड भिरावैं सम्हरावैं।

खंजरनु चलावैं दंतन खावैं भौंह चढ़ावैं धरधावैं ॥
ढालनु ढलकावैं ढकनु ढकावैं डावत आवैं भटभारे ।
इक औन सपेटे धूरि धुरैटे काल चपेटे भूपारे ॥८॥

छप्पय—धरि इक उद्धत जुद्ध चाल दखिनी दल खाइय ।
सम्भू अरु सुखराम जंग वहुरंग मचाइय ॥
रहे खेत सत एक चेत बिनु मरहठ भाज्जिय ।
निजु द्रगि लखि मल्लार हार अपने हिय लज्जिय ॥
वज्जत निसान वुल्लत फते श्रीसुजान घन वरसियौ ।
यह खवर पाइ सूरज वली सहित देस कुल हरषियौ ॥९॥

इति द्वितीय जंग ।

दो०—उसरि राउ मल्लार ने डेरा किये पछार ।
पाछे हीं कूरम चल्यौ सूरज मल्ल अगार ॥१॥
वगरू महलनि पहुँच कै नरपति डेरा दीन ।
चहूँ ओर अपनी चमू सावधान करि लीन ॥२॥
सनमुख जंग न जोरहीं वरगी दिन दिन साँझ ।
चहूँ ओर चमकत फिरैं ज्यौं विजुरी नभ माँझ ॥३॥
एक दिना कूरम नृपति सूरज मल्ल कुँवार ।
मन्त्र कियौ दोऊन मिलि लीजै धाइ मलार ॥४॥
यहै मन्त्र करि कटककौं सावधान कहि दीन ।
जैसे ही डेरा परत तैसे चलौ प्रवीन ॥५॥

छप्पय—चढ़ि चढ़ि निकसे वीर तीर तुपकनि को संधैं ।
असि द्वै द्वै तूनीर तुंग तोमर धरि कँधैं ॥

अनगन गोमुख तबल सबल वज्जत गल गज्जत।
तज्जत भीति अभीति तुरगनु बेगहि सज्जत॥
प्रभु हेत हेत जयदेत पग नेत नेत बानी कहत।
अंब लेत लेत अब लेत अब खेत खूँदि सम्मुख चहत॥
श्रोनित सलिल सिवार केस बहु बेस परे जहँ।
मेद गूद करि पंक सूकि पंकज सम सिर तहँ॥
दादुर बालत धाइ बेलि मुरझाइ परै कर।
मलिन मीन तरफरत धरत बहु रूप तहाँ धर॥
बहु गीध काग खग बसत जँह लसत नहीं काहू घरिय।
सूरज-प्रताप के ताप भुव छीन सरोवर सम करिय॥
बिजय पाइ दुंदुभि वजाइ आए सुजान भट।
बहुत भाइ सनमान पाइ बैठे सुजान तट॥
कहत जुद्ध बिरतत अन्त अरि कौ करि आइय।
श्री हरिदेव पतापु आपु जस कीर्ति बढ़ाइय॥
यह खबर पाइ जयसाह सुत भर उछाह धनि धनि कहिय।
बदनेस-नंद ब्रजचंद पर खल खडन बरु ते लहिय॥८॥

सो०—ऐसे कैऊ जुद्ध, जीते सिंह सुजान ने।
तव मलार ह्वै सुद्ध, कूरम सौं एकौ कियौ॥९॥

दो०—दोइ परगने लै दिए ईसुर सों मल्लार।
माधव कौं समझाइकैं पठै दियौ ननसार॥१०॥
पनु जीत्यौ मल्लाह कौ, मनु जीत्यौ-इसुरेस।
रन जीत्यौ सूरजचला थाँभि ढुँढाहर देस॥११॥

पवगा—तव कूरम चित चाय सुजान बुलाइकै।
हय, गय मुक्ताहार वसन पहराइकै॥

क्यौ अधिक सनमान विदा करि देस कौं।
कहियौ यह सन्देस नृपति बदनेस कौं ॥१२॥

सो०—ज्यों जैसाहि नरेस, करत कृपा तुव देस पैं।
त्यौं ब्रजेस बदनेस, करत रहौ हम पर कृपा ॥१३॥
फिरि आए निजु गेह, सहित नेह सब देह सौं।
जैस भावतु मेंह, बहुत काल सूखा भएँ ॥१४॥

दोहा—पग भेंटे बदनेस के, सूरज मन बच काइ।
तब उठाइ सिर सूँघिकैं लीनो अंक लगाइ ॥१५॥
तब सूरज कर जोरिकै कहे जुद्ध बिरतंत।
महाराज परिताप तें करि आए अरि-अंत ॥१६॥
सुनि सदेस बदनेस ने कियौ बहुत सनमान।
जथा जोग सब सूर कौं कीनो मान बखान ॥१७॥
इति तृतीय अंक।

सिद्धि श्रीमन्महाराजाधिराज ब्रजेन्द्र बदनेस-कुमार श्रीसुजानसिंह हेतवे कविसूदन विरचिते सुजान चरित्र बगरुमहल डूँगरी जुद्ध विजय वर्णन नाम द्वितीय जंग सम्पूर्ण।

## तृतीय जंग

कवित्त— बाप विष चाखै भैया पटमुख राखै देखि
आसन मैं राखै बसवास जाकौ अचलै।
भूतनु के छैया आसपास के रखैया
और कान्ती के नथैयाहू के ध्यानहू ते न चलै ॥

बैल, बाघ बाहन, बसन कौं गयंद-खाल
भाँग कौं धतूर कौं पसार देतु अचलै।
घर को हवालु यहै संकर की बाल कहै
लाज रहै कैसे पूत मोदक कौं मचलै ॥१॥

दो०—ठारौ सौ रु पचोतरा, पूस मास सित पच्छ।
श्री सुजान विक्रम कियो ताहि सुनौ नर दच्छ ॥२॥

अरिल्ल

बहुत दिना बीते निज देसहिं। तबहीं दूत कह्यौ सदेसहिं॥
दिल्लीपति बकसी इहि देसहिं। आवत तुमसौं करन कलेसहिं॥
सहस तीस असवार संग गनि। पैदल पील फौल बहुतै भनि।
जेरैं तुरक सहस दस बीसहि। आवत तुमसौं करि मन रीसहिं॥
इन्द्र नगर दच्छिन दिस कड्ढिय। निपट गरूर पूर हिय चड्ढिय।
कछू दिनतु आवै मेवातहि करिहै तहाँ अधिक उतपातहिं॥
थातैं वेगि करौ कछु घातहिं। जातें वाकौ होइ निपातहिं॥
यौं कहि दूत नाइ निज सीसहिं। सूरज आइ कह्यौ व्रज-ईसहिं॥
तुरक सहस जेरैं दस बीसहिं। दिल्ली तें निकस्यौ धरि रीसहिं॥
हमसे जुद्ध करन मन राखतु। महाराज मैं हूँ अभिलाषतु॥
आइसु ईस तुम्हारौ पाइय। तौ याकौं कछु हाथ लगाइय॥
तब व्रजेस सुनिकैं यह भाषिय। तात मतौ मो मन यह राखिय॥

सो०—दिल्ली तें कढ़ि दूरि, जब आवै मैदान भुव।
एक झपट करि सूर, याकौ दूर गरूर करि ॥४॥

दो०—मतौ मानि वदनेस कौ, सूरज उदित प्रतापु।
आयसु लै असवार है, करि हरदेव सुजापु ॥५॥

कूँच कियौ डेरा दियौ नौगाएँ मेवात।
तरन तनेने तेह सौं जुद्ध हेत ललचात ॥६॥

इति प्रथम अङ्क।

पवंगा—सूरज चारि उपाय प्रवीन सुचित्तई।
साम दाम अरु भेद दण्ड धरि नित्तई ॥
खल के मन की लैन बात करि सोल को।
विदा करी समुझाइ प्रवीन वकील को ॥१॥
देस काल बल ज्ञान लोभ करि हीन है।
स्वामि काम में लीन सुसील कुलीन है ॥
बहुविधि बरनै बानि हिये नहि भै रहै।
पर उर करै उदेग दूत तासौं लहै ॥२॥
खान सलावत पास वकील सुजाइकै।
करी सलाम कवाद अदाब बजाइकै ॥
नैननु लई सलाम सलावत खान ने।
कह्यौ कहा कहि बेग सुतोहि सुजान ने ॥३॥

दो०—कुँवर बहादुर ने प्रथम तुमकौं कह्यौ सलाम।
फेरि कही कि नवाब इत आए हैं किहि काम ॥४॥
करत चाकरी साह की हम पायौ यह देस।
ताहि उजारत आप क्यौं तुमको कह्यौ संदेस ॥५॥
जो कछु तुम्हैं दिवीस ने, कह्यौ ताहि कहि देउ।
ता माफिक हमसौं अबै आप चाकरी लेउ ॥६॥

छंद निसानी—इसी गल्ल धरि कन्न में वकसी मुसक्याना।
हमनूँ बूझत हौ तुसी क्यौं किया पयाना ॥
असी आवने भेदनू अवलौं नहिं जाना।
साह अहम्मद ने मुझे अपना करि माना ॥
तखत आगरा, ग्वालियर, हिंडौन, वयाना।
होडिल, पलवल, अलवरौ, मेवात सध्याना ॥
वार पार मथुरा तलक हुवा फरमाना।
वकसी की जागीर दै वकसी मैं ठाना ॥
इनमें तेजे तुझ तरै तहँ करि मो थाना।
दो करोर दे साहिनूँ सँग होहि सयानां ॥
होर कह्या है साहि ने सो भी सुन जाना।
असदखान सुरकार दा चाकर क्यों भाना ॥
तैं अपने मनमें गना वूड़ा तुरकाना।
कै एक गल्ल कवूल करि कै हो मरदाना ॥
जव यों कह्यौ नवाव ने सुन दूत असमाना।
मामल तिनहिं न होइसी दिल्ल अन्दर जाना ॥
उसी वख्त सिर नाइकै सो हुवा रवाना।
आगे सिंह सुजान को भेजा परवाना ॥७॥

सो०—श्री व्रजेस को नंद, कागद वाँचि वकील को।
अंग अंग आनन्द, हरखि हिये हरदेव कहि ॥८॥
सूरज कियौ विचार, सव डेरा ह्याईं रहें।
चंचल हय असवार पाइक चलों चलाक से ॥९॥

है नवाब दस कोस, कोस पाँच औरौ चलैं।
दिखा दिखीकैं जोस रोस भरे लरिहिं भलै ॥१०॥

यौं सिंह सुजान, पाँच कोस को कूँच करि।
चौकी करी अमान, सहस सहस असवार की ॥११॥

पद्धरी--इहि भाँति पाँच चौकी बनाइ।
यह कह्यौ वचन तिन सौं सुनाइ ॥
तुम जाउ चहूँ दिसि तें मरद।
पर बलहिं घेरि दीजै दरद ॥
जहं खान पान पावै न जान।
अरु जुद्धवार सब सन्निधान ॥१२॥

दो०—ऐसे वचन सुजान के सबै सुभट उर धारि।
बकसी की तकसी करन, चले सेल पटतारि ॥१३॥

भुजंगप्रयात—भए सैद के लोग सबै इकट्ठे।
मनौं सिंह की संक सो रोझ पट्ठे ॥
तहीं सोर बाढ्यौ कहें जट्ट आए।
करौ सावधानी रहौ ठौर ठाए ॥
सबै सैद की फौज यौं खलभलानी।
लगें आग के ज्यों उठै औटि पानी ॥
कही दौरि काहू सुनी आप बकसी।
लगी एकही बारही में धमक सी ॥
घरी एक में चेत है बीर बोल्यौ।

घणी बार लौं आपनों सीस डोल्यौ ॥
करौ बे करौ बेगही सावधानी ।
बुलाओ नकीबो नहीं बात मानी ॥१४॥

दो०—तब नकीब सों यौं कियौ हुकुम सलावतखान ।
तोप बान अरु रहकला चौकस करौ दवान ॥१५॥
तबही सूरज के सुभट निकट मचायौ दुंद ।
निकसि सकै नहिं एकहू, कर्‌यौ कटक मसमुंद ॥१६॥

इति द्वितीय अंक ।

छप्पय—छुट्टन लगे उद्दण्ड चण्ड कोदण्ड भुसंडी ।
जबर जंग घनघोर मारु गोलन की मंडी ॥
आस पास ब्रजवीर भीर बहु मोरतु पारतु ।
निकसि सकै नहि कोइ रैनि दिन जुद्ध विचारतु ॥
इह भाँति कछुक वासर गएँ तब बकसी रोसहिं भर्‌यौ ।
सरदार मद्धि दरबार जे तिनहिं आपु आइसु कर्‌यौ ॥

दो०—तुम सवार इस वार हो निकसौ सबै अगार ।
मैं भी साइत देखिकैं एक करौंगा मार ॥२॥
खान सलावत को हुकुम वे अमीर सुनि कान ।
अपने अपने मन लगे जुद्ध हेत ललचान ॥३॥

छप्पय--उन्नत असित मतंग ललित कंचन अम्बारिय ।
घन दामिनि के भेस गजनु घंटनु धुनि धारिय ॥
रुकम रजत वर वाजि साज साजे बहु रंगनि ।

तंगन लिए पतंग मनौ इम भरत छलंगनि ॥
अंगन अनूप कवचनि कसिय लसिय मनौ फनिधर खरे ।
हयनाल हंकि हथनाल हुव सुतनलि सनमुख धरे ॥४॥
दै दै दिग्घ निसान बान नीसान अग्ग धरि ।
चढ़े गयंदनु पिट्ठि दिट्ठि अति रोस रंग भरि ॥
चँवर चलत चहुँ ओर चारु सिप्पर चमकावत ।
चलत चमू चतुरंग मनहु पावस घन धावत ॥
ढुक्कत तवल्ल इक्कगल्ल खमल्ल भल्ल फेरत भले ।
सूरज-प्रताप-पावक निरषि मनु पतंग आवत चले ॥५॥

दो०—तवहीं सिंह सुजान सों, कही दूत ने धाय ।
आजु तुरक वाहर कढ़े, सजे सैन वहु भाय ॥६॥

सो०—सुनि तहँ सिंह सुजान, चारयो चौकी दृढ़ करी ।
सहस दोइ लै ज्वान, आपु चल्यो पुठवार कौं ॥७॥

भुजंगी—छुटे एक ही वार सो जुद्ध काजै ।
जुटे जाइकै धाइकै छोह साजैं ॥
खुटे खग्ग हथ्थौं अरव्वीनु चढ्ढे ।
हटैं नाहिं कोऊ सवै साथ वढ्ढे ॥
चहूँ ओर सौं सोरयौं घोर छायौ ।
मनौ सिन्धु सद्दे हवा को हलायौ ॥
किहूँ सेल सम्भारिकै हाँक कीनो ।
वियें तेग सौं काट कै डारि दीनो ॥
कहूँ सेल सन्नाह कौं फोरि वैठे ।

मनौ भानुजा में फनी जात पैठे ॥
लगे तीर तीखे कछू भाल दीसैं।
मनौ तीन नैना धरैं ईस रीसैं ॥
किते भाल भालेनु सों लाल कीने।
मनौ फाग के ख्याल के रंग भीने ॥
पलक एक ऐसे भई मारु भारी।
लखैं दूरि होतैं हसैं रैन चारी ॥
घए सूर कै सूर दै पाइ अग्गों।
डराने तहीं खान के लोग भग्गों ॥
जिन्हें स्वामि के काज की लाज भारी।
खड़े खेत खूनी नहीं संक धारी ॥८॥

दो०—अली कुली सु फतेअली कुवरा गए पलाइ।
रुस्तमखाँ रु हकीमखाँ ए पग रहे गड़ाइ ॥९॥

इति तृतीय अंक।

दो०—दुहूँ गयंदन पै चढ़े, धनुष वान गहि हत्थ।
जम-किंकर जिमि कोह कै नरनु करत लथपत्थ ॥१॥

संजुता—रन तैं न पाइ चलाइयै। धनुबान लै समुहाइयै ॥
बलु आपनौं सब संग लै। विफरे सुबीर उमंग लै ॥
तिहि देखि जट्ट झपट्टिए। पल एक माहिं दपट्टिए ॥
नवहीं सु तिनके साथ के। करि एक एकहिं हाथ के ॥
सरदार जूझत खेत मैं। भजि गए बहुत अचेत मैं ॥

तजि कैं हथ्यारनु पिट्ठि दै। धस गए लसकर निट्ठि दै ॥
व्रज-वीर हू तिन संग ही। चलि गए कटक ठमंग ही ॥

दो०—तबहीं बकसी के करक भलभल थरी अपार।
आए आए सब कहैं सूरज सुभट उदार ॥३॥
घरी चारि डेरा लुटे बुटे तुरक बेहाल।
जट्ट जट्ट कहतें फिरैं सबनै जान्यौं काल ॥४॥
फेरि वगद व्रज-वीर सौं आए ताही खेत।
जहाँ परे रुस्तमवली अरु हकीमखाँ रेत ॥५॥

कवित्त—चौंकतु चकत्ता जाकै कत्ता की कराकनि सौं,
सेल्ल की सराकनि न कोऊ जुरै जंग है ॥
कैयक अमीर मीर धीर तें फकीर करै,
वीर वलवीर कों सदा ही सुभी संग है ॥
सूदन सकल देस देसन अदेस भयौ,
भाजत दुवन ज्यौं लियैं तुरंग तंग है।
जैति कौं निधान तेज भान के समान मानौ,
आजु जहान में सुजान सुख रंग है ॥.॥

सवैया—जुद्ध जुरैं न मुरैं व्रज-वीर सुसेल्लनि सों धकपेल्ल मचाए।
जुग्गिन खप्पर पूरि नची पर के सिर दौर हरै पहराए ॥
फेर फिरे तन स्रोन भरे मनु भोर के भान सुरेस पैं आए
देखत सिंह सुजान अमान सुजान भरे उठि अंक लगाए ॥

त्रिभंगी—बाजे सहदाने सुजस पुराने नूर पुराने गुन गाने।
बकसी दल भाने मंगल माने यों सुख साने हरषाने ॥

आए अतुराने बाँधे बाने जे मरदाने समुहाने।
ते कंठ लगाने दै बहुमाने सूरज माने जग माने ॥८॥

इति चतुर्थ अंक।

तोमर

तबहीं सलावत खान। मन मैं भयौ कलिकान॥
हत जानि दोऊ बीर। अब को धरै रन धीर॥
जबही सु साम उपाइ। अपने हियैं ठहराइ॥
तबहीं वकील बुलाइ। कह्यौ बहुत समुझाइ॥
तू जा सुजानसिंह पास। हमसौं करै इखलास॥
सब मुलक उसको देहुँ। अरु आपने संग लेहुँ॥
ज्यौं बनैं त्यों तू लाउ। करिहौं बड़ौ उमराउ॥
जब यौं कही नवाव। सुवकील दीन्ह जुवाब॥
य कहत आपु नवाव। त्यौं कहौं जाइ सिताब॥
कहि यौं उठ्यौ सिर नाइ। तिहिं बार आयौ धाइ॥
जहँ हो व्रजेस कुँवार। रन भूमि कौं जितवार॥
तिहि देखि सिंह सुजान। कछु लग्यौ मृदु मुसिकान॥

दो०—कहि भेज्यो सु नवाव ने सो सब सुनी सुजान।
कही कि कह्यौ नवाव कौं हमकौं सबै प्रमान॥२॥
तब सूरज ने यौं कह्यौ मंद मंद मुसिकाइ।
मेरो जाइ सलाम तू कहियौ सीस नवाइ॥३॥
वे अदवी हमतें वनी ताहि न राखें चित्त।
ज्यौं चाकर हम साहि के त्यौं नवाव के नित्त॥४॥

जैसी कही नवाव की मानी सिंह सुजान।
त्यौंहीं सूरज की कही करी सलावत खान ॥५॥
श्री सुजान के पूत को हरवलु लियौ नवाबु।
कूँच डुँढाहर कौं कियौ दोउन गाँठ्यौ दावु ॥६॥
मुस्तकीम लखि तनय कौं हिय हरदेव मनाय।
धायो आयौ व्याह कौ रैन दिना इक भाय ॥७॥
तीन कर्म मैं एकहू जो मथुरा में होय।
फेरि न आवे जगत में यह विचार चित टोइ ॥८॥
दोइ कर्त परवस निरखि एक जानि निज हाथ।
कर्यौ व्याह मथुरा पुरहिं कृपा पाइ यदुनाथ ॥९॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीव्रजेन्द्र बदनेस कुमार श्री-सुजान सिंह हेतवे कवि सूदन विरचिते सुजान चरित्र सलावतखाँ समर विजय वर्णनो नाम तृतीय जंग समाप्तम्।

## चतुर्थ जंग

छप्पय—खुलित केस अधर खुलित भेस लोचन दिनेस-सिसु।
चन्द्रभाल त्रय नैन ज्वालमाला कृपाल किसु॥
कर कपाल नौगुन सुब्याल संग स्वान माल-धर।
असि त्रिसूल पट्वांग डमरू कर भस्म दिगम्बर॥
सिवसिवानंद समसान गृह समर सुरापानहिं करहिं।
जय बटुकनाथ जगनाथ जय भूत साथ जय उच्चरहिं॥१॥

दो०—अष्टादस षट वरस रितु पावस भादौं मास।
सूरज है मनसूर संग किय पठान दल नास ॥२॥

नवलराय मारयौ गयौ करि पठान सौं जुद्ध ।
सुनि वजीर मनसूर कैं तन मन उपज्यौ क्रुद्ध ॥३॥
तुरत अहम्मद साहिं सों अरज करी यह जाय ।
भाई काइमखान कैं अमल विगारयौ आय ॥४॥
मुझकौं रुखसद दीजियै ज्यौं न लगे कछु देर ।
हुकुम पाइ कैं साहकौं डारौं मऊ वखेर ॥५॥
सुनत साह दीन्हों हुकुम जो कछु चहियै लेउ ।
बे अदवी जोई करै तिसै जेर करि देउ ॥६॥
दो०—बाईसी सब साह की कियौ खजानौ हाथ ।
किये कूँच मनसूर ने दस हजार हय साथ ॥७॥
तोमर—इक कूँच एक मुकाम । चलतें लए बहु ग्राम ॥
दस पाँच दिन के वीच । पहुँचे सुकोल नगीच ।
तिह थान कीन मुकाम । बहु सैन साजि सकाम ॥
यह सैन संग वजीर । धरि कोल बैठिय धीर ॥
जिय जानि कै बलवान । वह राउ बुद्धि-निधान ॥
गहिकै सुकलम नबाब । लिखियौ सुपत्र सिताब ॥
व्रजराज कुँवर सुजान । तुझमा न हिन्दू आन ॥
यह देखतें करवान । करना मुझे बलवान ॥
इस वख्त ढील न होइ । चढ़ि आवना सब कोइ ॥
कछु खरच की नहिं ढील । हय लाउ पैदल पील ॥
नहिं दरका यह वख्त । मुझपै परी अब सख्त ॥
दो०—यों लिखिकै रुक्का दयौ दयानाथ के हाथ ।
सुतर सवार चलाइकै तुमकौं रहना साथ ॥९॥

सुतुर सवार सवार हो चल्यौ चाल उत्ताल !
पहुँच्यौ आइ सहार में जहाँ कुँवर ब्रजपाल ॥१०॥
करि सलाम कागद दयौ अरज करी यह बोल।
सफदरजंग नवाब अब डेरा कीने कोल ॥११॥
सफदरजंग नवाब को कागद बाँचि सुजान।
अरज करी बदनेस सौं तबही बुद्धि निधान ॥१२॥
सुनि ब्रजेस अज्ञा दई करनौ याकौ संग।
पै इन तुरकन सों कछू बूझतु नहीं प्रसंग ॥१३॥
जौ यह भेज्यौ साहकौ चल्यौ पठाननु पास।
तौ तोहूकौं पहुँचनौ पै न करौ बिसवास ॥१४॥
आइसु लै बदनेस कौ सुभ दिन कियौ पयान।
ठौर ठौर की फौज कौं भेजि दये फरवान ॥१५॥
भले भले सरदार जे ते सब पहुँचे आइ।
तौ लौं सफदरजंग कौ रुक्का आयौ धाइ ॥१७॥
देखत रुक्का कुँवरजी कही हरौ लहि बोल।
अब बहीर चलती करौ काल्हि पहुँचनौ कोल ॥१८॥
हुकुम पाइ कुतवाल ने दई बहीर लदाइ।
सूरज सूरज उदित ही चल्यौ कोल कूँ धाइ ॥१९॥

इति प्रथम अंक।

गाहा—सुनियं खबरि वजीरं बदन-तनं आइय सह सूरं।
इसमाइल तिहि अग्गं दिय पठाइ छाइ सुखपूरं ॥१॥
कुंड०—सूरज इस्माइल मिले दुहूँ परस्पर धाइ।
ज्यौं सूरज बुधसुत मिलत एक रास में आइ॥

एक रास में आइ दुहूँ आनंदन छाए।
इसमाइल्ल लै आइ मिसिल्ल डेरा करवाए ॥
करवाए सनमान भेज मीरन मन सूरज।
भूरज राखन हार जवै आयौ सुनि सूरज ॥२॥

सो०—सफदरजंग नवाब, आयौ जान सुजान कौं।
हियैं मिलन कौ चाव करि वैठ्यौ दीवान तव ॥३॥
खबरि भई तिहिं बार सूरजमल्ल कुँवार कौं।
कही कि जौ दरवार तो चलि मिलौं नवाब सों ॥४॥
यों कहि सिंह सुजान त्यार भयौ दरबार कौं।
जे निजु कृपानिधान तिनु सिरदारनु संग लै ॥५॥

कवित्त—आयौ सिंह सूजा हिन्दू ता सम न दूजा और
सुनत वजीर न समात फूल्यौ अंग मैं।
आगे उठि लीनो भरि मोद अंक भीनो बहु
कीनो सनमान सबहीं को परसंग मैं ॥
बूझि कुसरात गहि हाथ सौं सुजान हाथ
वैठक बताइ इखलास के प्रसंग मैं।
मीर उमरावन की भीर में दिपत दोऊ
भानु भृगु सोहैं ज्यौं सुरासुर संग मैं ॥६॥

पवंगा—तब वजीर मनसूर कुँवर वर वुज्झियै।
मेरा इस मैदान आवना सुज्झियै ॥
नाहक अहमद खान पठान अरुज्झियै।
नवलराइ करि जंग तिन्हैं से जुज्झियै ॥७॥

दो०—नवलराइ मार्यौ नहीं मार्यौ मोंहि पठान ।
तौ लौं कल नहिं दें उगौ जौ लौं इस तन जान ॥८॥
रमजानी अरु इसाखाँ मीर वका ए साथ ।
आए जुजवी फौज सौं नहीं इन्हौं के साथ ॥९॥

पवंगा—नहीं इन्हौं के साथ रिसाले साह के ।
रेजा और अमीर न खातिर खाह के ॥
मेरा तौ इतकाद एक है तुज्झ सौं ।
अब करना सो कहे कुँवरजी मुज्झसौं ॥
केती लाए फौज और क्या आवनी ।
सो सब लेउ बुलाइ न देर लगावनी ॥
जो कोइ तेरे साथ मिलैगा आइकै ।
करनी तिसकी और मुझे सुख पाइ कै ॥१०॥

दो०—यौं सुनिके बदनेस-सुत ता वजीर के वैन ।
बोल्यो तासौं अरि-दवन हियैं बढ़ावन चैन ॥११॥
ठाकुर साहिब ने कह्यौ मो सों चलती वार ।
जो कछु हुकुम नवाब कौं करनौं तुमकूँ सार ॥१२॥
ऐसे वचन सुजान के सुनिकै सफदर जंग ।
बोल्यौ सब हिन्दून में है ब्रजेन्द्र सुख रंग ॥१३॥
यौं कहिकैं मनसूर ने लै मोतिन की माल ।
श्रीसुजान के कंठ में डारी होत खुसाल ॥१४॥
श्रीसुजान सिरु नाइकै करि सलाम कर जोरि ।
अरज करिय मनसूर सौं अपनी बुद्धि बटोरि ॥१५॥

कवित्त—हम जिमींदार सरदार किए आपु आइ
हमैं निरधार बंदगी में नित जानौगे।
राजा राना राय उमराय सब साहिब के
कहे एक बार के अनेक करि मानौगे॥
सूदन सुजान कहै साहिब नवाब सुनौ
करनौ है मोहिं जोई मुखतैं बखानौगे।
चक्कवै चकत्ताजू के चोरनु कौं चूर करि
चुगल चबाइन कौं चौकस कै भानौगे॥१६॥

दो०—ऐसे बचन सुजान के सुनि वजीर मनसूर।
बोल्यौ जो हम तुम मिलैं तौ सबहोय जरूर॥१७॥

इति द्वितीय अंक।

दो०—फिर बीते द्वै तीन दिन सफदरजग नवाब।
कहि भेज्यौ नृप-कुँवर कौं करियै कूँच सिताब॥१॥
यह सुनिकै सूरज कही अबही डका देउ।
जितकौ कूँच नवाब कौ तितकौ पैंड़ो लेउ॥२॥

कवित्त—डकनि के सारे चहुँ ओर महाघोर घुरे
मानो घन घोरि घोरि उठे भुव आर तैं।
धवन्न पताका ते बलाका नील पीत श्याम
कैधौं रग रग के विहंग आदि मार तैं॥
मीन मनु दामिनि गयंद-मद नीर पाट
बाजत हयंद ज्यौं परतु जल जोर तैं।

पावस प्रकास कौं चढ़त पाक सासन ज्यौं
सफदरजंग ने पयानो कर्यौ कोरतैं ॥३॥

पावक कुलक—

सिंधुज-गंज दैइकै पाछैं। डेरा किए कटक लै आछैं।
कछुक दिननु मुकाम करवाए। पुनि धाये मारहरैं आए॥
असी हजार हयंद इकट्ठे। सफदरजग संग भए पट्ठे॥
पंद्रह सहस संग सूजा के। धरा धराके धीर लड़ाके॥
ऊँट गयंदनु की को बूझै। पैदल कौ जु असैदल सूझै॥
सफदरजंग जंग कौं कोप्यौ। डेरा जाय नदरई रोप्यौ॥
कारी नदी उतरि अतुरानौ। कासगंज पहुँच्यौ तररानौ॥
फिर करि कूँच नौलखा लीनौ। तहाँ व्यूह रचना कौ कीनौ॥

दुपई—यह सुनि अहमदखाँ पठानने सब पठान सों भाखो।
अब वजीर आयौ समुहायौ तुम क्या मसलति राखो॥
आवन कहत रुहेले ते भी आए कछू न आए।
जिसे तेग बाँधे की हिम्मति ते क्या रहैं दुराए॥
रुस्तमखाँ भाई से कहना अब हरीफ चढ़ि आए।
मऊ पठान बारहे सैयद काहे विरद कहाए
यौं सुनि अहमदखाँ का कहना सब पठान उठि धाए।
जो पठान तिसकौं तो लरना ऐसे वचन सुनाए॥५०॥

दो०—चलत अहम्मदखान के जेती जाति पठान।
लरके जोरु सँग धरैं आए बुद्धि निधान॥३॥

अब आप कहा फुरमावत हौ बिन जंग कहूँ अरि जेर भयौ ॥
अब तौ सब बीस हजारहिं हैं फिर लाख जुरैं नहिं जाय हयौ।
अरु जो तुमरे मन में यह बात तौ काहे कौं मोहि अगार दयौ॥१७॥

दो०—है मेरी मसलति यहै अब सवार तुम होहु।
धीरज सौं ठाढ़े रहौ देखौ बजै सु लोहु ॥१८॥
सुनि वजीर तैयार ह्वै कही कि होहु सवार।
सबही लसकर में कहौ बाँधें वेगि हथ्यार ॥१९॥
करि सलाम सूरज बली आगैं कियौ पयान।
जहाँ मोरचा आपनो आयौ ताही थान ॥२०॥

इति तृतीय जंग।

दो०—उत पठान अहमदखाँ इत वजीर मनसूर।
उद्ध जुद्ध कौं क्रुद्धि कै रुपे खेत भरपूर ॥१॥

हरगीत

बेहद नद गरद में सुदुरद कढ़िय आरसी।
लगि गोल सौं गहि गोल फुट्टतु करतु जनि ज्यौं फारसी ॥
तहँ जबर जंगनि अंग तें बहु कढ़ति धूम कराल सी।
धुनि काल सी विकराल सी भपु पाइ मीचु डकार सी ॥२॥

भुजंगी

सुनें सद्दकौं जुग्गिनी जूह ठट्टे। धए प्रेत पूता लए बाँधि मुट्ठे ॥
तहाँ कालिका काल लै संग धाई। सिवा ईस के धाम में यौं बधाई ॥
किती जच्छिनी गच्छनी व्यौम रंगा। महानी चुहूँ ने लई जागि जंभा॥
निकारी चहूँ ओर तें चाइ चिल्ही। परौं काइरौं कैं सुनै माइ ठिल्ही ॥

हुतौ वीच में धीर व्रजवीर गाढ़ौ । मनौ स्वर्न के वर्न कौ खंभ ठाढ़ौ ॥
कछू धीर धारे चले अग्ग वड्ढे । सवै सूर के सूर संग्राम रड्ढे ॥
तवै दूत ने मनसूर पासैं । करी वीनती जोर जा ओर रासैं ॥
सुनैं दूत की वात मनसूर मानी । तरफ दाहिनी को कमी फौज जानी ।३।

दो०—तव वजीर वा दूत कौं दै इनामु कहि खूव ।
जहाँ खड़ा सूरजवली तहाँ जाइया तूव ॥४॥
जो कछु कही नवाव ने सो कहि दीनी दूत ।
सुनत दाहिनें को मुर्‌यौ सूरज पन मजवूत ॥५॥
वढ़्यौ दाहिनी ओर कौं सूरजमल्ल कुमार ।
वल्लू, वलभ, गढ़पती राख्यौ आप अगार ॥६॥

अरिल्ल—

लखिय वीर वल्लू मन मोहिय । भ्रात पूत रन में परि सोहिय ॥
गहि कर तेग दई अरि सीसहिं । देखैं तो संग सुभट न दीसहिं ॥
तवही चित्त राजमत आइय । सूरज पास जंग यह ठाइय ॥
जवहीं वीर वाग गहि मोरिय । सूरज दृष्टि दई तिहिं ओरिय ॥

दो०—सूरज ने सुखराम सौं कही कि मामा वेग ।
जाहु जहाँ है चौधरी उड़ी वहुत क्यों रेग ॥८॥

इति चतुर्थ अंक ।

दो०—तवही अहमदखान पै खवरि गई भ्रसु पाइ ।
रुस्तमखाँ कटि जंगकौं लीनी फौज उठाय ॥१॥

मुतियादाम—

अहमदखान सुनो तिहि बार। कहिय न बीर बजावहु सार॥
तबै सुनि सादलखाँ किय हल्ल। बड़े सरदार महाभट मल्ल॥
करी जित दौरि सुवंगसपूत। हुतौ मनसूर जहाँ मजबूत॥
लराकनि आइ धरा कहि दीन। मरा कहिकै सुभ रौंक जमीन॥
जरा रहियौ बहुख्यौ रिस भीन। खराकहि खंजर मारिय सीन॥
कराक कराक सनाह कढ़ंत। छराक छराक धरा सुपढंत॥
सराक सराक सरौ सननाइ। झराक झराक बिदारिय काइ॥
पराक पराक परें भुजदण्ड। चराक चटक्कत हाड़ उदण्ड॥२॥

छप्पय—यह पन महमदअली-तनय भट थरिय जग मँह।
धाइय होत निसंक संक पारिय पर-दल कहँ॥
तिहिं लग्गिय भग्गिय सेर जंग बक्का रमजानी।
राउ बलोच अहीर पिट्टि दिय तजि दृग पानी॥
लखि चलत चमू बिचलित कटक चकित उजीर सरोस हिय
रनधीर इसाखाँ बीर तहँ भरि चीर जगहि लहिय॥

सारंग—

तब्बै रुहेलेनु लै लै करी रेल। खेलें मनौ फागु देके भये मेल॥
कोई चढ्यो दंति दै दंत पै पाउ। काहू गही पुच्छ की राह कै दाउ
केती छनाछन्न बाजी तहाँ तेग। माना महामेघ में चँचला बेग।
किन्नो इसाखाँन कों मारिकै चूर। कट्यौ तऊ सीस हट्यौ नहीं सूर
हाथी सुधाँ सव्व हाथी पर्यो खेत। संग्राम में स्वामि के काम के हेतु
मंसूर को भागनो सो कहै कौन। मानो चटै गौन लागै महापौन॥

अस्सी सहस वाज छोड़ी सबै लाज। जैसे कुलंगा वूटैं देखते वाज
जा खेत मंसूर भग्यौ सु धाँमीर। ताखेत सूजा रुप्यौ है महाधीर

इति पंचम अंक।

कवित्त—गरद मसान किरवान वरछा वानन तें
रुस्तमखान घमसान घोर करतौ।
कहूँ रहैं मुन्ड कहूँ तुंड भुजदंड भुंड
कहूँ पाइ काइ फर मंडल कों भरतौ॥
सेल सांग सिप्पर सनाह सर श्रौनित मैं
कोट काट डारे धर पाइ तौ सौ धरतौ।
हरतौ हरीफ मान तरतौ समुद्ध जुद्ध
कुद्ध ज्वाल जरतौ अराकनि सौं अरतौ॥१॥

गरद गुवार में अपार तरवार धार
मानौ नीहार मैं किरनि भीर भान की।
कहरि लहरि प्रलै सिंधु में अधीर मीन
मानौ धुरवान मैं तमक तडितान की॥
ज्योतिन को जाल है कि ज्वाला को अचल चल
ऐसी जंग देखी तहाँ प्रबल पठान की।
भृकुटी भयान की सुजान की उभय सान
मंगल समान भई मूरति सुजान की॥२॥

दो०—रुस्तमखाँ सनमुख लख्यौ करि सुजान दृग लाल।
कालजमन के काल कौं ज्यौं मुचकुंद भुवाल॥३॥

छप्पय—झलझलात रिस ज्वाल वदनसुत चहुँ दिसि चाहिय।
प्रलय करन त्रिपुरारि कुपित जनु गंग उमाहिय॥
तिंहि लखि सब ब्रजवीर उमड़े गन जिमि रंगनि धरि।
अंगनि भरे उमंग जंग हित भुवभंगनि करि॥
दै अग्ग पग्ग फर मग्ग में रग्ग वग्ग सायुध धइय।
लै लै दवान मैदान मैं सब अमान सनमुख भइय॥४॥

कवित्त—गेंदा से गुलफ गुलमेंहदी से अंत भार
कुप्पय कलित तास खोपरी सुभाल की।
नासा गुलवासा मुख सूरजमुखी भुज
कलगा वधूक ओठ जीव द्युति लाल की॥
कोकनद कर ज्यों करन गुल कोकन से
इंदीवर नैन वाल जात अलि माल की।
पानी किरवानी सौं हरयानी कर सूरज कै
पर भूमि फूली फुलवारी मानौ काल की॥५॥

सो०—यह अचरज की बात दोऊ जीते जग में।
उत पठान हरखात इत सुजान नरसिंह सौं॥६॥

दो०—रुस्तम खाँ रन दै छुट्यौ भाजि छुट्यौ मनसूर।
अहमद खाँ सूरज बली दुहूँ रहे मगरूर॥७॥
साठ सवारनु सौं खड़ौ रन में सूरज सूर।
तहाँ खबर पाइ यहै भग्यौ क्रूर मनसूर॥८॥
उद्धत जानि सुजान कौं जुद्ध हेत ब्रजवीर।
अरज करी कर जोरिकैं ज्यों समुझै रनधीर॥९॥

सो०—सुनि महाराज कुँवार ए पठान दस सहस हय।
इत में साठ सवार कहा रारि कैसे बनै ॥१०॥

पद्धरी

इमि सुनत कुँवरवर नरनुनाह। विरम्यौ पलास वन की सुछाँह।
लखि पीत धुजा पुच्छिय पठान। इह खेत कौन खग्गिय अमान॥
तब कही दूत यह है सुजान। जिनि रुस्तमखाँ खाइय पठान॥
सो सुनत कही अहमद्खान। सनमुख न जाइ इसके पठान॥
अपनी अनीक की राह देखि। यह कही सिंह सूरज विसेखि॥
मम फौज कौन विधि मिलै आय। सोई उपाय कीजै बनाय॥
जौ आह कही तौ कहत एहु। चलि कारी सरिता तटहिं लेहु॥
यौं सुनत सिंह सूरज गँभीर। कीनौं पयान गति धीर धीर॥११

दो०—तहाँ खबरि निज फौज की पाई सिंह सुजान।
कछूक मैंडू मैं रही कछूक मथुरा थान॥१२॥
त्यों ही सुनी वजीर ने दिल्ली कियौ पयान।
तब आयौ निज देस कौं आपनु सिंह सुजान॥१३॥

इति षष्ठ अंक।

सो०—मुख गयंद सिर चंद दुति अमंद वंदन धरैं।
जयति जयति भवनन्द दुख निकंद आनन्द कर॥१॥
दो०—साहि जहानाबाद मैं जाइ फेरि मनसूर।
लिखि भेज्यौ मल्लार कौं आऔ आप जरूर॥२॥
अर्ध लक्ख हय लै चल्यौ दच्छिन तैं मल्लार।
खबर पाइ मनसूर फिर डेरा कियौ अगार॥३॥

मालती

को सनमान बुलाय सुजान। कियौ बहुमान वजीरहि आन।
लियौ सु अगार कुमार सुजान। कियौ सु पयान दुहूँ बलवान ॥४

दो०—एक ओर मल्लार दलु दूजैं सिंह सुजान।
उतहि रुहेले अग्ग धरि सनमुख भये पठान ॥५॥

चहूँ ओर धौसान के छाए सद्द अहद्द।
मनहुँ गंग के मिलन कौं आयौ सिन्धु बिहद्द ॥६॥

दोइ जाम बीतन लगे खड़े सुभट विनु जंग।
तब सुजान के दल वलनु आगे करी उमंग ॥७॥

उततैं धायौ ताँतिया इततैं सिंह सुजान।
दु ' दवरि दल में परे जिहिं थल रुपे पठान ॥८॥

छंद—रुहेले पठानों करी यों बरी मार।
बली वीर जहाँ वजायौ बनौसार ॥
कटे भू पटे सो हटे खेत पट्ठान।
जहाँ सिंह सूजा कस्यौ वीर घमसान ॥
परे चारिहू ओर तैं दक्खिनी टूटि।
भजे खेत पट्ठान लोने कछू लूटि ॥९॥

दो०—जंग जीति सूरजमली आयौ जहाँ नवाब।
तब वजीर पट्ठान पै आगैं कियौ दबाव ॥१०॥

छप्पय—हैं कलकान पठान सबै मन माँहि विचारयौ।
करि मल्हार सौं सधि बखत आपनौ सुदारयौ ॥

तीन भाग भुव करी एक मनसूरहिं दीनी।
एक दई मल्लार एक अपनी करि लीनी॥
उलख्यौ उजीर दिसि पूर्व कौं गंग तीर की राह गहि।
परदल विदारि परदेस तैं श्री सुजान आयौ घरहिं॥११॥

सिद्धि श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीव्रजेन्द्र कुमार श्रीसुजान सिंह हेतवे कवि सूदन विरचिते सुजान चरित्रे पठान युद्ध उभय वर्णनो नाम चतुर्थ जंग समाप्तः।

## पंचम जंग

छप्पय—अनकप-आनन अमल कमल-कर कोस-दोस-हत।
ओषधीस सुभ सीस कोटि तैंतीस करत नत॥
हस अंस-अवतंस-वंस भव भच्छि उजागर।
एक दसन सुचि वसन रसन नव निधि-सिधि सागर॥
जगमात-तात उतपातहर जग विख्यात मोदक असन।
खनीय खन वानी वरद जयति जयति भूपक-लसन॥१॥

दो०—ब्रह्म सिद्धि धरि बिन्दु निधि बरस गतागत माह।
घास हरे पै कोप करि चल्यौ सूर नर नाह॥ ॥

हुतै नगर पुरहूत कै सूरज सफदर जंग।
दोउनि मिलि मसलति करी करनौ जो जो ढंग॥३॥

तब वजीर मनसूर ने कही कि सिंह सुजान।
जिन्होंने मुझकों तन दियौ तिन्हैं करौ बिन जान॥४॥

अवल मुझै वडगूजरै तावत करना जानि।
रफ्ते २ और भी रहे मुखालिफ़ मानि।५॥

मल्लिका—यौं कही वजीर धीर। बुल्लियौ सुजान वीर॥
जो कछू कहैं नवाब। ताहि कीजियै सिताब॥
साहि को हुकुम्म लेउ। आपुही मुहीम देउ॥
सो वजीर चित धारि। साहि पै गयौ विचारि॥६॥

दो०—हुकुम साह को है यही तुमकौं सिंह सुजान।
राउ वहादुर सिंह कौं तावत करनै जान॥७॥
सरोपाउ समसेर दै फुरमायौ मनसूर।
घासहरै पै कुँवर जी जाना तुम्हें जरूर॥८॥
सबै सैन तैयार हुव करि दुंदुभी धुकार।
सिंह जवाहर निकट हुव जै जै शब्द अपार॥९॥

अनुगीत

तिथि त्रोदशी सनमुख सखी रवि राहु को वल पाइ।
धरि ध्यान हिय मधि प्रीति सों हरदेव कौं सिरनाइ॥
सुभ लग्न में निरविघ्न चाहैउय तनय सिंह सुजान।
फहरान पीत निसान प्रवल प्रताप पावक मान॥
अति दीह दुंदुभि वज्जियं मुनि गज्जियं घनघोर।
वल सज्जियं गलगज्जियं चहुँ ओर ज्यों पिक मोर॥१०॥

कवित्त—वज्जत दिलद्द नेरो दुंदुभी धुकारन सों
दुन्द दवि जात देस देस सुख जाही के।

दिन दिन दूनौ महिमण्डलु प्रतापु होत
सूदन दुनी में ऐसे बखत न काही के ॥
उद्धत सुजान-सुत बुद्धि बलवान सुनि
दिल्ली के दरनि बाजे आवज उछाही के ।
जाही के भरोसे अब तखत उमाही करै
पाही से खरे हैं जो सिपाही पातसाही के ॥११॥

इति प्रथम अंक

दो०—बग्ग दुग्ग बिंघोर घोस ब्याल रूप है राउ ।
ताकौं हूँ क्यौं आनिकै सूरज ज्यौं खगराउ ॥१॥
रवि राका मकरंद की सूरज रोपिय रारि ।
हय-दल पैदल संग लै हल्ल करिय रिस धारि ॥२॥

छप्पय—ठुक्किय दिग्घ निसान पुंज गिरवर गन गुंजिय ।
पीत केतु फहरानि देखि दुसमन मन मुंजिय ॥
चंचल तुंग तुरंग जंगहित भरत वलंगनि ।
पाइक साइक संधि अगाहुव करत छलंगनि ॥
इम सैन साजि सूरज चढ़िय जिहि सम सूर न भूमि बिय
वढ़ि वीरविकट तिहिं दुग्ग तनु घोर दृष्टि चहुँ ओर दिय
जोजन अर्ध अकार दुग्ग दुर्गम मधि सरवर ।
दच्छिन पच्छिम ओर प्रबल जग रह्यौ पूरि जर ॥
वसु हजार नर सुभट रहे समुहाय सत्र नहि ।
लोह-जच चहुँ ओर तासु तट कौन सकै लहि ॥

लखि ताहि सूर सूरजवली सिंह जवाहर सौं कहिय।
तुम जग धनद-दिस तैं लहौ पुत्र द्वार आपु न गहिय ॥

नूफा—खलभल परी दुग्ग मँझार। दलवल दपट देखि अपार ॥
कलवल करत नर अरु नार। छलवल कोट-ओट निहार ॥
दरवर धाइ सूरज सूर। अरवर पारियौ पर पूर ॥
हरवर कही राउ निहार। नर करौ सकल सम्हार ॥
झरवर होन लागी चोट। भर भर कागुरनि की ओट ॥
प्राची औ उदीची ओर। रारि माँची ऐसी घोर ॥५॥

छप्पय—उत्तर दिसि गढ़ विकट निकट जुहिय जग जाहर।
सेनापति तिहि चारि रारि हित सिंह जवाहर ॥
दै दवान किरवान वान धाइय तिहिं ठाहर।
सहिय घोर घमसान तोप जजाल हियाहर ॥
वहुतोरि फोरि मुरचान कौं मोरि सुभट अरि उग्ग हिय।
पुर द्वार रुक्कि ठाड़ौ बली सबै दुग्ग मुसमुंद किय ॥६॥

पद्धरी—

वह राउ महा धीरज-निधान। है घरी दोइ मैं सावधान ॥
तब कही वीर क्यों सूनसान। कह पलटि गयौ गढ़ ते सुजान ॥
सो सुनत कहौ जो हुते तीर। है फौज जहाँ की तहाँ वीर ॥
रन संग तुमारे गए धीर। ते सव सच्छत देखे सरीर ॥
यह सुनत राउ चहुँधा निहारि। सुत भ्रात गात घाइल विचारि ॥
धरि धीर उठ्यौ वह तिहीं तंत। चित चाहतु है परदल-सुअंत ॥७॥

तारक—निज मंदिर तै कढ़ि बाहिर आयौ।
लखि सैन सबै मन धीरज पायौ॥
गढ़ पूरब द्वार चल्यौ अनुरानौ।
तहँ आइ कह्यौ यह बैन सयानौ॥
एहि बार रहौ सब चौकस भाई।
अरि कौं नहिं देखन देउ जु खाई॥
समयौ यह धीरज हौ धरिबे कौं।
नर वीर पराक्रम के करिबे कौं॥८॥

दो०—टूटि फूटि बहु सुभट गे दिखा दिखी इत उत्त।
रैनि भर भड़के भए जैसें अच्छर दुत्त॥९॥
निसा जानि सूरज बली बेलदार बुलवाइ।
सुभट हते जे दुग्ग तट तिन पैं दए पठाइ॥१०॥
जैसी पाइ भूमि जिन तैसी ओट बनाइ।
भुव खुदाई परिखा निकट दिए मोरचा जाइ॥११॥

इति द्वितीय अंक।

दुपई—या विधि वासर ईस समर दुहुँ ओर।
जबर जंग जञ्जाल परिय घन घोर॥
चंडो चलत भुसंडी खंडी सैन।
मडो रारि उदंडी छंडी हैन॥
तब चित माहिं विचारिय बदन-कुमार।
चहुँ दिसि गढ़हिं निहारिय ह्वै असवार॥

दच्छिन पच्छिम ओर हुतो जो नीर।
सो कहुँ कहूँ गयो सूखि सुगढ़ के तीर॥
ताहि विलोकि वदन-तन सिंह सुजान।
दुग्गहिं चहुँ दिसि घेरन कियहु बिधान॥१॥

दो०—गढ़ नैऋत दच्छिन दिसा अति उद्भट भट सथ्थ।
दिए मोरचा जोर करि सूरज-सुत वड़ हथ्थ॥२॥

तोमर—दिस जानि नैऋत ओर। तहँ थप्पियौ कर जोरि॥
वकसी सुभोहत राम। द्विज सिज्ज सूर उदाम॥
तिहिं के अगार उदार। दै सुभट संग अपार॥
तिहिं तै सुपच्छिम ओर। द्विज उदैभान सजोर॥
तिहिं निकट सुभट अनेक। रुप्पिय धरें रन टेक॥
अरु आप सब पुठवार। सुत श्री सुजान कुँवार॥३॥

त्रिभंगी—

धरि चारिहूँ ओरन पैदल घोरन देत मरोरन मुच्छन कौं॥
बहु तोप जँजालन अरु हथनालन भरि घुरनालन गुच्छन कौं॥
चहुँ कोनन घेरिय ज्यौं पग वेरिय गौन निवेरिय दुग्ग रहा॥
छंडत बहु चंडिय जोर मुसंडिय धूम घूमंडिय घोर महा॥
दुहुँ ओर उद्ध किय घोर जुद्ध गढ़ देखि रुद्ध पुर लोग कुद्ध॥
सब उदास गए राउ पास अति त्रास धार कहियौ पुकार॥
सुनि राउ वीर तुमकौं न पीर तुम तौ अभीत हमतौं सभीत॥
नृप की सुरीति करियै सुनीति लखि देसकाल निज बुद्धि हाल॥४॥

दो०—पुर पुरजा पतिनी तनय बचैं दिसहूँ वित्त ॥
तौ सलाह करि राउ तू, है सबही के चित्त ॥५॥

सो०—यौ सुनि बोल्यौ राउ अब उपाय नहिं संधि कौ ।
जो सब करौ दबाउ तौ जालिम कौं भेजियै ॥६॥
यह सुनिकै पुर लोग आए जालिमसिंह तट ।
है अति बाँकौ रोग सो कटिहै तुमतैं बली ॥७॥

दो०—सबकी मसलति जानि कै जालिमसिंह विचार ।
कौल वचन करि राउ सौं चल्यौ मिटावन रार ॥८॥

दुपई—जालिमसिंह बैठि नर वाहन जब गढ़ बाहिर आयौ ।
जाकौं देखि सिंह सूरज नै बहु सन्मान करायौ ॥
जो कछु अरज करी जालिम ने सो सूरज ने मानी ।
तुरत आइ सो कही राउ सौं जो कछु दैनि बखानी ॥
तबही राउ कही जालिम सौं कहौ कहा करि आए ।
कैसे करी सलाह कुँवर सौं तब जालिम समुझाए ॥
कहे दैन दस लाख रुपैया तोप रहकला सब्बै ।
जबही ए पहुँचे सुजान पै उठै मोरचा तब्बै ॥
यह सुनि कही राउ मैं देहौं दस के द्वै हू औरौ ।
तोप रहकला देउँ न एकौ स्यानो कहौ कि बौरौ ॥९॥

सो०—ये सुनि जालिम बैन महा हठीले राउ के ।
फिर न दिखाए नैन तरफ़रात ही ज्यौं तज्यौ ॥१०॥

दो०—जालिमसिंह मर्यौ जबै खबरि पाइ कै सूर ।
जान्यौ अबही राउ को घट्यौ न नेक गरूर ॥११॥

पाद कुलक—

जालिम सिंह जु मोपै आयौ। ताको फेरि जुवाव न पायौ ॥
तातैं लेनौ सोधौ पाकौ। तब उपाय करिहौं मैं ताकौ ॥
अमरसिंह मंझा सुत बोल्यौ। तासों मंत्र आपनो खोल्यौ ॥
अब तुम जाउ राउ कै पासैं। देखौ वाके मन कौ आसै ॥
अरु गढ़ कौ सौधौ सब लैयौ चौहानन हू कौं समुझैयौ ॥
अमरसिंह गढ़ मैं यौं पैठ्यौ। मानों सनि आठे घर बैठ्यौ ॥
कुसल बूझि दोऊ बतराने। प्रथम राउ ए बैन बखाने ॥
एक बात मेरी सुनि लीजै। तापै अमरसिंह चित दीजै ॥
है कन पानि दुग्ग में जौ लौं। तौ लौं गनौ न तुमसे सौं लौं ॥
जब बारूद अन्न विति जैहै। तब होनी ह्वैहै सो ह्वैहै ॥
गहि कर खग्ग दुग्ग कैं द्वारैं। अपने कर्म धर्म उर धारैं ॥
मंगल मई भूमि करि दैहों। कीरति सुता रची गति पैहों ॥१२॥

दो०—धरनी धरनी नरन की बरनी है जो साथ।
करि करनी भरनी दुऔ फरनी प्रभु के हाथ ॥१३॥

सो०—ऐसे बचन अनेक बड़ गूजर बतक्यो जवै।
तब हिम धरे विवेक अमरसिंह नै यौं कह्यौ ॥१४॥

कवित्त—बौरे बड़गूजर बकतु कहा बार बार
ब्रज में ब्रजेस भयौ बदन प्रचंड है।
ताकौ सिंह सूजा-सुत भूजा के अधीन सब
जाकौ तू विरोधी रह्यौ चाहतु अदंड है ॥

जैसे जै विजै जगदीस ते जनम पाइ
जगत मैं जान्यौ त्यौंही तुहू भयौ चंड है।
जाकौ यह खंड चढ़ि आयौ बलवंड
सोई तोकौं धरि दण्ड महा उद्धत उदंड है ॥१५॥

वैतवै—

सुनी जब राव ने ये अमरवानी। भरी छत्त की तवै हिय बुद्धि ठानी॥
कही जब राव ने सुनि अमर भाई। सही तेरौ कह्यौ मो चित्त आई॥
घिर्‌यौ गढ़ जान कोऊ ना पतीजै। निसा ज्यौं होय त्यौंही तोप कीजै॥
निसा की सुनि सुबानी अमरमानी। सुजानैं पास ज्यौं की त्यौं बखानी॥
यही सुनि कै कही सूरज सुकीसी। नहीं तौ जर गई हम जान लीनी॥
पठायौ अमर! वाकौ माल आछैं। निसा वाकी करौ हमरी सु पाछैं॥१६

पद्धरी—साँचे वचन विचार वदन सुत के सवै।
अमरसिंह सिर नाइ गयौ गढ़ में तवै॥
माल सवै लदवाइ राव कौ तथ्य ही।
दिल्ली दियौ पठाइ मनुज निज सथ्य ही॥१७॥

दो०—पितु कौ कागद वाँच कै सुत ने माल सम्हार।
सूरज के अनुचरन सौं कीनौं ब्याव विचार॥१८॥

खिमानंद ने जब करी अति ताकीद जताइ।
फतेसिंह तब यौं कही देहौं निसा कराइ॥१९॥

सो०—खिमानंद तुम जाउ कुँवर बहादुर सौं कहौ।
दीनौ तुम कौं राउ जो चाहौ सो कीजिये॥२०॥

दुपई—खिमानंद यौं ज्वाब पाइकै सूरज के ढिंग आयौ।
जो कछु कौतुक भयौ दिल्ली मैं सो सब आनि सुनायौ॥
सुनि सुजान मुसिकाइ राव की ए छल-बल की बातैं।
कही कहा जानतु मैं नाहीं बड़गूजर की घातैं॥
ज्यों पयपान भुजंगै दीजै केवल विष ही बाढ़ै।
पटल पेटि ज्यौं धरै दहन कन जहाँ परै तहाँ डाढ़ै॥
ज्यौं खल सौं कीजै सज्जनता सज्जन सौं खलताई।
लहै न सिद्धि एक हू जग मैं कहा रंक कह राई॥२१॥

दो०—बदी करै तासौं बदी करत दोसु नहिं होइ।
अब याकौं हौं मारिहौं होनी होइ सुहोइ॥२२॥

इति तृतीय अङ्क।

दो०—माधव बदि छठि भूमि सुत सूरज्ज हिय निरधार।
दुग्गलेन निजु दल बलन कहि भेज्यौ हित रार॥१॥
आस पास वा दुग्ग कौं सुभट रहे जे घेरि।
कहि भेज्यौं तिनसौं गुपत आजु न करनी देर॥२॥
एक जाम जब निसि रहै सुनि टामक की सद्द।
चहूँ ओर तैं दुग्ग पै हल्ला करौ मरद्द॥३॥
पूरव पच्छिम उत्तरौं तीन्यौ दिसि तैं धाय।
घासहरे के दुग्ग पै सूरज दीने पाय॥४॥
दुग्ग दच्छिन दिस तच्छनो हियैं धारि उत्साह।
जाहरसिंह जवाहरौ धायौ सज्जि सिपाह॥५॥

छप्पय—पितु कौ आयसु मानि समौं पहचानि जुद्ध हित।
वहु सुभट्ट संवट्ट लिएउ गव्वर गरट्ट तित॥
जिते हुते मुरचानि तिनहिं निजु हुकुम पठाइय।
मैं आवतु तुम सथ्थ तथ्थ गढ़ करहु चढ़ाइय॥
सुनि वेहू सव चौकस भए लए हथ्थ आयुध सवर।
इत सिंह जवाहर सिलह करि गहिय ढाल तलवार कर॥

नीसानी—फते हुधा गढ़ वाहला वहु लोक विलुन्ना।
कोलाहल पुर में पड़ा हाहा सुर सुन्ना॥
कोट कँगुरो पुर गली मरहट्ठ लखाया।
कंहीं मुंड कहीं रुण्ड है कहिं फट्टी काया॥
कहें भभूके अग्गि दै धूराँ घुमड़ावा।
कहिं निंगर कुड़िए कहों कहिं भाया जाया॥
कहिं मामू कहिं भानजा कहिं ससुरा साला।
कहों माइ कहिं पुत्त है वहुवा विनु वाला॥
हव्भौं खड़े पुकारद सूरज दी दोही।
हुण रैयत हैं रावली करुणा चित्त जोही॥
वह मतिमंदा राव था कर्मां दा मारा।
सूरजराज कुँवार सैं जिन दोप विचारा॥७॥

सुन्दरी—यौं पुर लोग पुकारत आरत वार फिकारत ठौर ठए।
छोड़ि तिन्हैं व्रजवीर वली अति उद्धव धामनु धाइ गए।
जीवत जानत रांव वहादुर जासु लियैं भट भूरि हए।
छंडत चंड भुसंडिनु ठंड सुमंडित मोरचा फेरि गए॥

मरहठा—तव भाई बंदन विकल विलंदन समुझायो बहु राव।
पुरदेस लुटायो लोग कटायौ तऊ न आई आव॥
पहलै गढ़ घेर्यौ अव अरि नेर्यौ तासौं नहीं बचाव।
तवहीं नहिं मानी भई सुजानी करियै साम उपाव॥ ॥

उल्लाला

यौं सुनत राउ सब के वचन अपने चित्त निहचै कर्यौ।
मिलनौ न मोहिं मरनौ सही तवहिं बक्र विधि उच्चर्यौ॥१०॥

दोधक—

हौ सब सूर सहायक मेरे। जुद्ध करे तुमने बहुतेरे।
हौ तुम जान अजान न कोई। लाज रहै करियै अब सोई।
पै इतनो मत मो सुनि लीजै। दीन भयें अरि सौं बहु जीजै॥
सूरज सौं मिलिबो मत दीजै। जौ यह जानत तौ भल कीजै॥
भूमि यहै तुमकौं फिर दैहै। औरन संग तुरी भर लैहै॥
तोप जंजाल तुरंगम बाकी। ते हम पै रहिहैं तुम ताकी॥
और यहू तुमरे मन भावै। वैरिनु सौं मिलि जीवतु आवै॥
जो कबहूँ हम जीवत छोड़ा। तौ करिहै अपनौ कर ओड़ा॥१

दो०—गीता हू मैं यौं कह्यौ वेद पुराननि टोहि।
अनहोनी होनी नहीं होनी होइ सु होय॥१२
आयु राखि है मर्म छत आयु अन्न प्रिय देइ।
विजै और नहिं होइ रन भजै न दीनत्ति लेइ * ॥१३॥

---

* यह दोहा—आयू रक्षति मर्माणि आयुरन्नं प्रयच्छति।
अर्जुनस्य प्रतिज्ञे द्वे न दैन्यं न पलायनम्॥
का अनुवाद है।

दुपई—

यह सुनत राउ के वचनसवन मिलि चलत अरावौ राख्यौ ।
चढ़ि दुग्ग कुँवर सौं मिलन आइहै चहुँ ओर यौं भाख्यौ ॥
अब देउ पठाइ वेगि रथं वहलैं कढ़ै कबीला जैसौ ।
सब लोग वाग कों लेउ काढ़िकै सहित लाज जिय ऐसौ ॥
वहु ए पुकार सुनि श्रीसुजान कहि यहू बात हम मानी ।
अब ह्वैहैं कहा गरीबनु मारैं निकसौ करैं अमानी ॥
तब परे लोग खरराइ दुग्गतें सूरज की सुनि बानी ।
ज्यौं जीरन जार तौरिकैं भाजै मीन देखि ढिग पानी ॥
सब सस्त्र वस्त्र सौं जत्र तत्र ह्वै परे कूदि भयभीते ।
मुख देत दुहाई श्रीसुजान की विकल भए मुख पीते ॥
ते लिए राखि बदनेस नंद ने गढ़ खाली करि डार्‌यौ ।
सब रहे पाँच सै मनुज राउ संग सूने डंडा चार्‌यौ ॥१४॥

विजोहा—

देखि या हाल कौं दुग्ग के चालकौं। राउ बोल्यौ जबै पास देखे सबै ॥
ढील क्यों है करी भाजिबे की घरी। प्रान राखौ अरे होहु मोतें परे
राउ देखौ इसौ सिंह धायौ जिसौ : इक्कमीयाँ तहाँ बोलि उठ्यौ जहाँ ॥
राउ जी क्यों बकौ वख्त नाहीं तकौ। कै सुजानै मिलौ जंग कौ कै पिलौ

चौबोला—

ऐसे वचन सुनत बढ़ गूजर उठ्यौ ढाल तलवार लियैं ।
गयौ तुरत ही भौन भीतरैं जंग रंग कौ राखि हियैं ॥
क्रुद्ध दीठि सों राउ गयौ घर लखि काइर मुख सूकि गए ।
तजे तुरत अंग के आयुध टलाटली के व्यौंत लए ॥

राउ चढ़ौ प्रासाद सैनिकैं किये परिरंभन प्रान प्रिया।
मृदु मुसिकाइ मंगाइ वारुनी पान परसपर दिया लिया ॥१६॥

कवित्त—बैठे एक आसन सुआसन के वासन से
भूष उजासनु प्रकास बहु कीनौ है।
सरस विलोकि फेरि करके परस भए
दरसि दरसि दोऊ रति मति कीनौ है॥
भुजनि उसारि लीनी उरसौं लगाइ प्यारी
अरस परस अधरामृत कौं लीनो है।
दोऊ जलजात मुख मानो मनजात जान
इन्दु अरविन्दु कौ मिलापु करि दीनौ है ॥१७॥

सो० - फेरि राउ धरि धीर कह्यौ वैन बर बाम सौं।
प्यारी होत अधीर शत्रु मारि फिरि आइहौं ॥१८॥

छंद—कढ्यौ दुग्ग तैं राउ दै घोर निसान।
घरी तीन आसमान में ज्यौं रह्यौ भान॥
जुहे डेढ़ सै में रहे एक सौ ज्वान।
चढ़े राउ के संग आसा तजै प्रान॥
किलै पुव्व द्वारैं पिल्यौ आइयौ बीर।
तहाँ सूर के सूर की ही भरी भीर॥
तहाँ राउहू जंग कौं आन औसान।
लए हाथ टंकारि कम्मान औ वान॥
चल्यौ मंद ही मंद वैरीनु के फंद।
मनौं क्वार के वादरों में धस्यौ चंद॥

चल्यौ गाहतौ चाहतौ जूह के जूह ।
मनो पथ्थ के पूत पैठ्यौ चक्रा व्यूह ॥
किधौं नीर गंभीर को चीरतौ ग्राहु ।
सुराधीस की सैन मैं ज्यौं धँसै राउ ॥
तवै चित्त चिल्यौ सुवड़ गूजरौ नाहु ।
लई काढ़ि समसेर धायौ महावाहु ॥
जिते मैं वदंल्ला सुहल्ला करयौ तथ्थ ।
जहीं तेग तेगा कढ़े एक ही सथ्थ ॥
भमाभम्म वीती धमाधम्म ता ठौर ।
झरी फुलझरी सी मनौ विज्जु की झौर ॥
जुट्यौ देखि रावै वुटे तीनि ता वार ।
रह्यौ राव के संग मैं एक असवार ॥१९॥

छप्पय--तवै मेव यह कही वीर ठाढ़ौ रहि ठाढ़ौ ।
अव नहिं जीवत जाइ लौह करिहैं। रन गाढ़ौ ॥
सुनत राव ह्वै क्रुद्ध जुद्ध मैं तेगहिं झारिय ।
तहीं मेव गहि छेव तुरंगम तैं गहि डारिय ॥
भूपारि परी ह्वै तीनि असि वड़गूजर के अंग पर ।
लिय सीस काटि सथ्थी सहित राव रुण्ड सोयौ समर ॥२०॥

पद्धरी—

विन सीस परयौ वह राउ खेत । रन विजय शब्द सूरजहिं देव ॥
वज्जै सहदानै घोरि घोरि । वुल्लत फत्तूह सूरजहिं ओर ॥
पुनि श्री सुजान हूँ हरषि पाइ । भट मेटि जुद्ध श्रम दिय मिटाइ ॥
अरु सिंह जवाहर हू हरष्षि । निज सुभट भेटि मौजहि विरष्षि ॥२१॥

कवित्त---दलन दलैया दीह देसन दवैया उग्ग
दुग्गन दरैया खल-खंडन रह सूक्यौ सौ।
छिति के छितीसनु की छाती छनि छार भई
प्रेषत प्रताप तेरौ प्रबल भभूक्यौ सौ॥
सूदन सकल सिंह सूरज तिहारे धाक
धूमनु करत रहे दक्खिनी विभूक्यौ सौ।
सहित अमीर पीर धीर न धरत उर
चौंकि चौंकि चाहत चकत्ता चित चूक्यौ सौ॥

इति चतुर्थ अंक।

इति श्रीमान महाराजाधिराजब्रजेन्द्रनदन श्रीसुजानि हेतवे कविसूदन विरचिते सुजान चरित्रे वासहरौ विजय न पंचमौ जंग समाप्तम्।

## षष्ठ जंग

छप्पय—धरि सत रज तम रूप सजति पालति संहारति।*
आरत लखि सुरराज विपति असुरन कौं पारति॥
धूम चंड अरु मुंड महिष रकता रज भंजति।
सिंभु निसुंभु चबाइ चारु दस लोकन रंजति॥
जाकी विभूति परब्रह्महू निरगुन तैं गुनमय वरनि।
मुनि देव मनुज सूदन रटत जयति जयति शंकर-घ

*रजोजपे जन्मनि सत्ववृत्तये स्मितौप्रजानां प्रलये तमस्पृशें, भाव यह चरण है।

दो०—गत पुरान सत बरष सत मधुरित माधव मास ।
सूरज हित मनसूर कैं गह्यौ दिल्ली पै गाँस ॥२॥

पातसाहि अहमंद कें भौ वजीर मनसूर ।
पोता मलिक निजाम कौ वकसी भौ मगरूर ॥३॥

तूरानी वकसी भयौ ईरानी सुवजीर ।
नाचाखी दोऊन मैं दिल्लीपति के तीर ॥४॥

नीसानी—एक रोज पातसाह दी वकसी लै गरजी ।
विन वजीर दीवान में कीनी यह अरजी ॥
हजरत सफदरजंग मैं क्या अदव वजाया ।
नाजर फिदवी साहि का है दगा खिपाया ॥
साहिजिहानावाद मैं जद सैं यह आया ।
तद सैं हुकुम हुजूर का नहिं एक वजाया ॥
पोता मलिक निजाम दा जव यौं वतराया ।
सो सुनिकें पतसाहि भी दिल मैं सव ल्याया ॥
तिसी वख्त मनसूर सैं यौं कहि भिजवाया ।
जाना अपने मुल्क कौं हजरत फुरमाया ॥
फेरि साहि मनसूर कौं अहदी लगवाया ।
साहि जिहानावाद तें तदही कढ़वाया ॥
वड़ा कुँवर अरु काइदा मनसूर गँवाया ।
दिल्ली सें वाहर हुवैं मनसूर रिसाया ॥
जे रफीक थे आपने तिनकौं वुलवाया ।
पूरव सैं निज फौजनूं जलदी फुरमाया ॥

चाकर मेरा है वही जो आवै धाया।
घासहरै कौ कुँवर भी फरचा करि आया॥
खबर पाइ मनसूर भी खुसियौं सें छाया।
तिसि बख्त मनसूर ने फरमान लिखाया॥
रहमति दै कहि आफरीं इलकाब बधाया।
कुवर बहादुर आवना मेरा करि साया॥
चाहो मैडीं जिन्दगी तौ आवौ धाया।
यौं लिख सफदरजंग ने फरमान पठाया॥
घासहरैं था कुँवरजी रनरंग अठाया।
तिस कागज के बाँचतैं सूरज मुसिक्याया॥
अपना विरद सँभारिया दिल और न लाया।
अच्छी साइत देखिकै डंका लगवाया॥५॥

सो०—पुनि मिलि सिंह सुजान सफदरजंग वजीर सौं।
डेरा किए अमान खिद्र बाग रविजा-तटहिं॥६॥

कलहंस—दिन दूसरैं मनसूर सूरज पास कौं।
दरबार ह्वै असवार सो इखलास कौं॥
लखि कैं वजीर सुजान हू सनमान कौं।
बहु भाइ अदब बजाइ दै बहु मान कौं॥
ढिग देखि सफदरजंग सिंह सुजान कौं।
सब पूछियौ विरतंत आवन जान कौं॥
यह मैं मुकर्रर है किया तुम सैं कही।
अब तौ दिली दहबह करनी है ही॥

जब यौं कही मनसूर सूरज सौं सबै।
समुझाइयौ सुवजीर कौं बहुधा तबै॥
तुम हौ पनाह सनाह या हिन्दुवान के।
नहिं आपु लाइक बात ए गुन आन के॥८॥

दो०—हम चाकर हैं तखत के सकती करी न जाइ।
यह उपाय करिहौं अपुन तौ बलु सबै बसाइ॥
अब दिन द्वै में रामदलु आयौ जानौ पास।
श्री हरिदेव भली करैं क्यों तुम होत उदास॥९॥

सो०—यह सुनिकैं मनसूर, दोऊ कर ऊँचे करे।
फिर मुख आयौ नूर कह्यौ बहादुर आफरीं॥१०॥
लख्यौ सुदीन वजीर, सूरज सबै कबूल किय।
ह्वै सवार रणधीर, दिल्ली के सनमुष भयौ॥११॥

इति प्रथम अंक।

दो०—फेरि आइ मनसूर ने कीनौ भेद उपाइ।
पोता काम जु बकस कौं लीनो गुपत बुलाइ॥१॥

छप्पय—ताहि तख्त बैठारि धारि सिर छाय जटित जर।
चँवर मोरछल्ल ढारि कियउ इतमाम आम घर॥
अरुन बरन नीसान तानियौ अरुन वितानहि।
सहदाने घन घोरि दियौ उमरावनु मानहि॥
उद्धत हयंद सुगयंद नर बहु सुभट्ट हाजिर प्रबल।
सूरज सहाय मनसूर नैं घट्यौ साहि अकबर अदल॥२॥

पाव कुलक—

अकबर अदल साहि धरि आगैं। सफदरजंग जंग अनुरागैं॥
अपनी चमू साजि गढ़ चढ्यौ। तूराननि पै अति रिस बढ्यौ॥
इसमाइल राजेन्द्र गुसाईं। सफदरजंग भए अगवाईं॥
तबही सूरज हूँ ने डंका। सब तैं आइ चढ्यौ रनबंका॥
तातैं अग्ग जवाहर धायौ। सजिकैं सैन दिल्ली समुहायौ॥
सफदरजंग जोरि दल एतौ। चढ्यौ इन्द्रपुर कौ भय देतौ॥
जिते हयंद गयंदन वाले। ते सब रेती के पथ चाले॥
लियौ तोपखानौ करि हल्ला। अरब सराय मचाई अल्ला।
इतनौ देखि वजीर सिहानौ। फिर डेरन कूँ कियौ पयानौ॥३॥

मालती—

अहमद साहि सुनै अकुलाहि रह्यौ हग चाहि कछू न बसाहि।
सबै उमराइ लए सुबुलाइ कह्यौ समुझाइ करौ सुउपाइ।
गजद्दियखान तबै ढिग आन करो जुसलाम भख्यौ जहँ आम।
कहै अब रास जुहै मुझ पास सुहाजर हाल सुजानहु माल॥४॥

दो०—जान माल सै साहि का फिदवी हाजर हाल।
रजा होइ सुगुलाम कौं मनसूरा क्या माल॥५॥

कुंडलिया—अरजी बकसी की सुनत साहि अहमद साहि।
पोता मलिक निजाम कौं कियौ वजीर सराहि॥
कियौ वजीर सराहि और यह मतौ उपायौ।
समसामुद्दौलाहि मीर बकसी ठहरायौ

ठहरायौ सब दैन तोपखानौ रन गरजी।
सुनी अहमदसाहि गाजीदखाँ की अरजी ॥६॥

दो०—निकट अहमद साहि के रह्यौ गाजदीखान।
बकसी तैं जु वजीर भौ जुद्ध हेत बलवान ॥७॥

लीलावती—

पुनि श्री सुजान अरुसिंह जवाहर करि सिलाह धरि आह वढ़े।
लै मसलति अकबर अदल वजीरसिंह सहर पुराने जाइ चढ़े ॥
है दल सब संग अग्ग धरि पैदल तिनहि वीर यह हुकुम कियौ ॥
अब लेइ ईंट करि देउ ईंट सौं दिल्ली सहर हम तुमहिं दियौ ॥८॥

छप्पय—जब सुजान नर कहिय तनय जाहर सु जवाहर।
तब सुनि सब ब्रजवीर हरखि हुँकिय ज्यौं नाहर ॥
करिय हल्ल बहु मल्ल रल्ल पुर मद्धि मचाइय।
कहत देव हरि देव देव-पति को जु दुहाइय ॥
चहुँ ओर सोर अति घोर हुव तोरि फोरि भवतनु भरिय।
दिल्ली दरयाव बहु अब जुत सूरज-दल दलदल करिय ॥९॥

कवित्त—लाल दरवाजे पर सूरज सुभट गाजे
ताजे ताजे वीर हथ्थ आयुध दराजे हैं।
भाजे पुर लोगन कपाट दरवाजे दीने
ऊरध भुसंडिनु कैं उद्धत अवाजे हैं ॥
कहूँ सर बाजे छर बाजे तमञ्चर बाजे
बाजे बाजे भाठिनु सौं भोरे सिर साजे हैं।

जग के लराजे उभराज लहि छाजे ओट
केत लोट पोट मिले आजे पर आजे हैं ॥१०॥
महल सराय सैखाने बुआ बूबू करौ
मुझै अपसोच वड़ा बड़ी बीबी जानी का।
आलम में मालुम चकत्ता का यारों
जिसका हवाल है तनैया जैसा तानी का॥
खने खाने बीच सैं अमाने लोग जाने लगे
आफत ही जानो हुआ ओज दहकानो का।
रब की रजा है हमैं सहना वजा है वख्त
हिन्दू का गजा है आया ओर तुरकानो का ॥११॥

पद्धरी—

यों पस्त्रो सोर दिल्ली अपार। पुर लोग पुकारत बार बार॥
व्रजवीर हँकारत डार डार। फटकार खग्ग सेलनु उसार॥
कलवल गलीनु खलभल वजार। छलबल संभार भज्जत अगार॥
इक तजुत आयुध छोर छोर। इक लज्जत आनन मोर मोर॥
इक कहत धिक्क अहम्मद साहि। नहिं देखतु या पुर की दसाहि॥
जिहिं जियत इन्द्रपुर यौं कुहत। गज वाज बृषभा लुटंत ॥१२॥

दो०—देस देस तजि लच्छिमी दिल्ली कियौ निवास।
अति अधर्म लखि लूट मिस चली करन व्रजत्रास ॥१३॥

कवित्त—धर्म-सुत-धाम जान जमुना निकट मान
सर्वमेद जज्ञ कौ वनायौ ब्यौंत पूर है।
पत्र फल फूल सब औषध समूल रस
पट अनतूल धात धान धन भूर है॥

अंडज जरायुज औ स्वेदज उद्भिज हवि
करयौ पूरनाहुति चकत्ता कुल मूर है।
औज की अगिन इन्द्रपुर सों अगिनकुंड
होता श्री सुजान जजमान मनसूर है ॥१५॥

दुपई—

कलिकी आदि क्रूर मघवाने वृज पै कोपु जतायौ है।
वही अकस धरि श्री व्रजेस-सुत इन्द्र-पुरहिं लुटवायौ है ॥१६॥

इति द्वितीय अंक।

त्रिभगी—

व्रजवासी सगरे करि करिदगरे दिल्ली वगरे लूटि करैं।
मनसूर विचारै अव को रारै याहि सँभारै संक भरैं॥
सूरजहिं वुलायौ कहि सबुझायौ सो दलु हायौ समुहायौ।
अव लूटहिं थंभौ जगहि रंभौ करयौ अचंभौ मन भायौ ॥१॥

दो०—मनभायौं ह्वै ह्वै सबै सूरज कही नवाव।
अव मैं लूटहिं वंद करि लैहों जंग सिताव ॥२॥

अनुगीत—यौं कहि सिताव सुजान उट्ठिय मनहुँ तुट्ठिय ईस।
ढिग वोलि सिंह जवाहरै किय हुकुम विस्वा वीस॥
अव फौज राखहु एकठौ. अरु करहु लूटहिं वन्द।
सुत तो विना यह को करै नहिं आन कौ परवंद॥
यह सुनत जाहर सुत जवाहर तात हुकुम वजाइ।
तिहिं वार ह्वै असवार धाइय दई लूट मिटाइ॥

ज्यौं वायु के वस वारि वाहक मंत्र के उतपात ।
त्यौं सलभ सावर के प्रयोगहिं छिनक में उड़ि जात ॥
लखि ऊर्ज नाभी बदनतें है तार को विस्तार ।
त्यौं श्रीजवाहर नै कियौ सब लूट कौ परिहार ॥
पुनि सैन सज्जिय पटह बज्जिय गज गरज्जि हयंद ।
यौं सुनत ही मनसूर चढ्ढिय दैन दिल्लिय दंड ॥३॥

सारंग—

छायौ महाधूम धूली घटाघोर । उट्ठै जहाँ रंजकैं बिज्जु सी जोर ॥
पज्जै घनी तोप गज्जैं निरद्धार । देखैं दुहूँ सैन के जात आकार ॥
धुंधी धरा धूसलो धूम गुब्बार । मानौ मलैकाल्ल कौ घोर अँधियार
ओलानु के भेस गोलानु के मेह । फोरै घनै मुंड टोरैं कहूँ देह ॥
बौछारि गालीनु की चारिहूँ ओर । बानौन की घोर मानौ उड़े मोर
लुट्टैं कहूँ बाजि फुट्टैं कहूँ भात । गोलानु की गेंद खेलैं मनौकाल ।४

दो०—सेल साँग समसेर सर गहे भुसुंड्डी हत्थ ।
मसकि मसकि बानोनु कौ हल्ल करी इक सत्थ ॥५॥

कवित्तः—श्रोनित अरघ ढारि लुत्थि जुत्थि पाँवड़े दे
दारू-धूम धूप दीप रंजक की ज्वालिका ।
चरवी कौ चंदन पुहुप पल टूकनु के
अच्छत अखंड गोला गोलिनु की चालिका ॥
नैवेद नीको साहि सहित दिली कौ दल
कामना विचारी मनसूर पन-पालिका ।

कोटरा के निकट विकट जंग जोरि सूजा
भली विधि पूजा कै प्रसन्न कीनी कालिका ॥६॥
तूरा तैं तरेर दै दरेरनु सौं दिल्ली दावि
प्रबल पठान ना उड़ायौ पौन पत्ता सौ।
कूरम रठौर हाड़ा खीची औ पँवार राना
थाना डारि छूटे बाँधि कीनौ एक वत्ता सौ॥
सूदन सपूत ससिवंस अवतंस वीर
ताही दिल्लीपति कौं लपेटि राख्यौ गत्ता सौ॥
जाहर जगत्ता है जवाहर प्रताप तत्ता
जाके कर कत्ता सौं कत्ता जारयौ लत्ता सौ॥७॥

दो०—प्रबल अगावैं [illegible] विकट सहर पुठवार॥
वृथा जुद्ध [illegible] होत सुभट संहार॥८॥
यौं समुझाइ सुजाननैं आइ जवाहर पास।
घरी चारि दिन के रहत डेरनु कियौ निवास॥९॥
जे सच्छत आए [illegible] नै कियौ उपाय।
जिन पायौ प[illegible] जमुना पहुँचाय॥१०॥

[illegible] अक।

[illegible]

सूजाऊ मंसूर भेले [illegible] बोल्यौ भरॅ ताप मंसूर यौं आप।
मेरा तुही अव्वल कै [illegible] जुतैं काम पाया बड़ा नाम
लीनी घनी जंग दिल्ली [illegible] खुदा इता लोग कूटा नहीं रोम

दै तोप की ओट टूटा नहीं कोट हैगी मुझै चोट कीया जिन्हैं खोट
लीयै तुझै जोट मारौं दिली कोट करना कछू तोहि सो भाषियै मोहि
मंसूर के वैन सूजा सुने ऐन कीनौ यही तंत दीनौ तवै मंत।
रेती तजौ आपु औटयौ घनौ तापु लीजै अवै झील कीजै नहीं ढील ॥

दो०—इतमैं लूटि चुके दिली उतमें रही अदग्ग ।
हाँ वे बाहर आइहैं तबही बाजै खग्ग ॥२॥

छंद—सूरज सों सब मानी। कूँच करायौ देर न लायौ।
दुंदुभि डंके देत असंके। ढोल दमामैं भाजत आमैं ॥
गोमुख गज्जै तूर गरज्जै। हत्थिय घोरैं पैदल थोरैं।
उच्च पताका पार न ताका। यौं दल उठ्यौ ज्यों वन तुठ्यौ
देत हरेरैं झीलहिं नेरैं। डेरनु दंकै चौकस कैकैं।
फेरि उमाह्यौ जुद्धहिं चाह्यौ। सूरज वंका देत अतंका ॥३॥

गीतिका

इहि छे उपायू दिलीस सैनहिं जात वार मलग्गहीं।
गज वाजि पैदल छांड़िकैं थल-जुद्ध तैं भल भग्गहीं ॥
पुनि आइ सूरज के सुभट्टनु दिक्खि गोकुल राम कौं।
रन-भूमि तैं धरि लै चले गन पाइ दुःख उदाम कौं ॥४॥

उल्लाला—यह खवर गाजदीखान पैं साहि जहानाबाद हुव।
मनसूर सहित सूरजवली उलटि गए तिलपत्ति धुव ॥५॥

नीसानीः—पोता मलिक निजाम दा सुनि एही गल्लाँ।
हुकुम माँगिया साहिसैं हुआ अग्गैं चल्लाँ ॥
फरमाया पति साहि भी अच्छी दिल जोई।

अग्ग अरावा ले चढ़ौ हरवल करि कोई ॥
करि सलाम रुखसद हुआ गाजुदीं आया ।
संग पठान रुहैल लै पुर ही तट छाया ॥६॥

दो०:—निरपि रुहेले की चमू श्री सुजान मे क्रुद्ध ।
दुष्ट दिष्ट आए भलैं कह्यौ चाहि चित जुद्ध ॥७॥
देव देव हरिदेव की जाइ दुहाई लच्छ ।
जो विपच्छ नहिं तच्छ है गच्छन सच्छत अच्छ ॥८॥

त्रिभंगी

सुनि: सूरज बानी रिस लपटानी धरनि सिहानी भूख भरी ।
पलके आहारी ललके भारो अंबर चारी भीर करी ।
गिरि धूरि जटी के जुद्ध जुटी के मद्ध कुटी के रौर परी ।
मारू सुर लीना आवज बीना नृत्यहिं कीना तेह घरी ॥९॥

दो०:—नेह घरी असिकर करी सूरज परगन चाहि ।
कही सूर सेनाधिपनु सत्रु न जीवत जाहि ॥१०॥

नीसानी:—मारु मारु मुख अक्खदे दे दे हक्कारे ।
सेख रुहेले भागिये छुट्टा छक्कारे ॥
गिरते पड़ते धत्तिये करि कत्ते कत्ते ।
सूरज सूर पुकार दे सूरज दो फत्ते ॥११॥

कवित्त:—हेला देत आये बगमेला ज्यौं रुहेला वीर,
गैंदा गढ़ी के तीर सुभट महारथी ।
तेई काटि डारे रुंड मुंड झुंड ढारे दै
चमुंडन अहारे भौ प्रसंग जुद्ध पारथी ॥

रुधिर के थारे परे बीच असरारे पारे,
रविजा-मिलाप कौं सुरेस भयौ सारथी।
सूदन सुजानसिंह विक्रम-निधान महि
जान बान-गंगा कौं करी क्वान भारथी ॥१२॥

मालिनी—सुभट सिमिटि आए। सूर के पास धाए॥
हरषनु हिय छाए। जंग की जैति पाए ॥१३॥
धन धन रव लाए। कंठ सौं लै लगाए।
समर-श्रम मिटाए। मान सनमान पाए ॥१४॥

इति चतुर्थ अंक

सादरा— दिन बीत दस बीस पुनि धारि मन रीस।
सजि सैन भय दैन चढ़ि नन्द ब्रज-ईस॥
लिय साहि तुकलान गढ़ भूमि बलवान।
जहँ कालिका थान रन देखि मरदान ॥११॥

निशि पालिका—

सूर दल देखि उत साहि दल सज्जियौ।
बाजि गजराज साजि तूर बहु बज्जियौ।
केतु फहरान घहरान घन दुदुंभी।
सहस्र ल्हहरान ठहरान चक चुंधुभी॥
बान किरवान तन-मान धरि कढ्ढिये।
जान भरि सान मरदान बहु चढ्ढिये॥
होइ असवार तिहि वार इक ओर तैं।
गोल करि गोल बहु मोल हय सोर तैं ॥२॥

रुचिरा—

साहि-अनीक विलोकि वदन सुत । चरहिं वुलाइ कह्यौ तवहीं ।
है इनमें को को सेनापति कुहू दूत । दुहूँ कर जोरि कही ॥३॥

पाव कुलक—

ए जँह स्याम निसाननु वारे । ते पठान ठाढ़े रन रारे ॥
है जित ध्वजा नील सित चण्डी । सो रुहेल की सैन घुमंडी ॥
जहाँ भगोही उड़े पताका । तहाँ दक्खिनी जंग चलाका ॥
लाल सेत जह ए धुज ठाढ़ी । यहै सैन वकसी की गाढ़ी ॥
जहाँ सेल साँगे वहु भाले । सो अवरी रिसाले वाले ॥
आस पास इनके भय दानौ । रुप्यौ तोपखानौ समसानौ ॥
सव की पुट्ठि छाइ दल चण्डौ । दे रन दाखिल है वलवंडौ ॥
नाम गाजदीखाँ वल वंडौ । विक्रम-वलित वुद्धि परचंडौ ॥
श्रीसुजान, सुनिकैं चरवानी । जुद्ध-वुद्धि निहचै मन ठानी ॥
अपने सेनापती वुलाए । जग हेत आगैं रुपवाए ॥४॥

दो०—वासर के तीजे पहर साहि सुभट करि रल्ल ।
जुटे आइ स्यों सिंह सह लै मरहट भुज भल्ल ॥५॥

पद्धरी—

स्यौंसिंह भयौ सो सिंह रूप । हनि साहि सुभट मृग से अनूप ॥
हुव लाल लाल वसुधा कराल । स्रौनित्त जाल ज्यौंह कोह ज्वाल ॥
जहँ सेल सांग समसेर ढाल । वन्दूक वान जंजाल जाल ॥
गहि गहि सुजान भट चंड चाल । दिय घोर मार दिय लोह झाल ॥
सुख मारु मारु कै करत सार । विकरार भगे दक्खिनी अपार ॥
रव विजय पाइ स्यौंसिंह वीर । घाइल सुमार फर रुपिय धीर ॥३॥

त्रिभंगी—

भरि बथ्थनि पटके दै दै झटके हयतैं पटके श्रौन भरे।
अस्तिनु के चटके टापनु बटके अतनि अटके जुद्ध परे॥
केते घट घटके आयुध कटके केते सटके संक भरे।
तिहिं सूरज बंका दै रन हंका करि अरि फंका दूरि करे॥७॥

दो०—कटे फटे निवटे हटे लखे साहि दल जंग।
फते पाइ सूरज बली लख्यौ पुरोहित ंग

कवित्त—द्रोन अघवाई द्रोनी क्रप अँचवाई ग्वाई
सोई तैं जगाइकैं बुझाई प्यास चंडी की।
ताही खेत प्रेतनु पलाकैं भट पीठिनु के
मुंडनु के बाट हाट आमिष उदंडी की॥
सूदन दिलीस दल चाहिकैं समर गाहि
साहि की प्रतापानल खग्ग जल ठंडी की।
लागिक भुसुंडी जीभ जाव जुग खंडी तऊ
छडी है न जंग मंडी किति यों घमंडी की॥९॥

पाई गननाइक सौं तैंई गननाइकता
त्यौंहीं दिगपाल दिगपालता प्रतीति की।
तेज पायौ रवि तैं मजेज सतम॰ पास
अवनी कौ भोगिवौ अधिक नाथ नीति की॥
सीलताई ससि तैं पवित्रताई पावक तैं
लाज पाई सिन्धुतैं सुनीति वेद रीति की।
सूदन अभीत सर्वज्ञता सुबुद्धि सूजा
दीनी जगदीस विधि तोही जंगजीति की॥१०॥

समानिका—वीति गे कछू दिना । जंग के किए विना ॥
एक घोस भोरहीं । दै निसान घोरहीं ॥
ह्वै सवार तथ्थ ही । लै अभीर सथ्थ ही ॥
सो वजीर आइयौ । मंत्र कौ उपाइयौ ॥
श्रीसुजान के पास कौं । कूच के प्रकास कौं ॥
थापि मन्त्र ता घरी । कूच की हियैं धरी ॥
तव्व ही पयान कै । इति भीति मान कै ॥११॥

दो०—हुकुम गाजदी खान कौ सब अमीर धरि सीस ।
वड़ौ अरावौ अग्ग धरि हय सहस्र चढ़ि वीस ॥१२॥
साह जहानाबाद तैं द्वै जोजन भुव बढ़ि ।
सब डेरनु चौकस करिय फेरि जुद्ध कौं चढ़ि ॥१३॥

कवित्तः—एक दस सौक मैं न सहस अपुत बीच ।
लच्छ दस कोटि मैं न काहू नर दम है ॥
साहस सगूह सूर वीरन कौ साहीदार ।
सनमुख धायौ कहा कल्हिू में कम है ॥
सूदन समर साहि सैन तृन तूल वानी ।
हनी देह गोलिन न खाई खेत खभ है ॥
तन मन धन रन ऐसै मुहकम होइ ।
जैसो वैरी साल सुत जूझ्यौ मुहकम है ॥१४॥

सो०—यह सुनि सिंह सुजान निरखि साँझ मन मौन गहि ।
सहित वजीर अमान दाखिल निज डेरनु भए ॥१५॥

इति पंचम अंक।

पावकुलक—पुनि गाजदीं खान चितियौ चित्त में।
माधौसिंह बुलाइ करौं निज हित्त में ॥
आपा और मलार बेगि बुलवाइयै।
आपुन हो पुठवार इन्हैं उरभाइयै ॥१॥
हस्त रोज़ के बीच दस्त करि आवना।
दस्त आपके पस्त हरीफ करावना ॥
यौं फरमान लिखाइ डाक चलवाइ कै।
माधौसिंहहिं पास दयौ पठवाइ कैं ॥२॥

दो०—फेरि दक्खिनिनु कौं लिख्यौं आपु गाजदींखान।
सूरज और मनसूर मिलि किया तरत कलकान ॥४॥
अवधि आगरा साहिनै तुमकौं दियौ बताइ।
नगद खर्च जो फौज का चामिल लैना आइ ॥४॥

सुमुखी—

पुनि दल सज्जिय घोरधनौ। पटह गरज्जिय मेघ मनौ ॥
फहरत हैं सित स्यामभुजा। अरुन हरीत सुनील दुजा ॥
चढ़त चमू चतुरंग महा। उडि रज अंबर भान गहा ॥
सहित अराबहिं कूँच कियौ। तबहिं फरीदहि बाद लियौ ॥५

मोदक—

सूरजहू अपने चित सोचत। जंग विना चित सोचन मोचत
माधव औ दखिनी दल आवहिं। तौ इन सौं नहिं जंग रचाव
जौ लग वे नहिं आवन पावत। तौ लौं साहस एक उपावत
एक झपट्ट करौं यितु संकहि। लै मनसूर हजूर सुवंकहिं

तोपनु ओट करैं वहु चोटनु । ते असि साँग हनो अरि मोटनु ॥
यौं निहचै करिकैं अपने मन । वोलि नवाव करयौ सकौ पन ॥
वैतवै—सजे सब सैन कौं यारो तहाँ मनसूर आया है ।
कहौ क्या है वहादुर दिल सुजानै यौं सुनाया है ॥
नहीं वदनेक कौं जानौं मुझे तौ दस्त साया है ।
भला जो होय सो करना खुदा नै तो वताया है ॥
तवै मनसूर सौं सूजा दुहूँ कर जोरिकैं भाखी ।
हुकुम जो आपको पाऊँ सही करि जंग मैं राखी ॥७॥
तोमर—तवही सुजान अमान । उठि जुद्ध कौं बलवान ॥
किय वाम ओर वजीर । तिहि संग सैन गभीर ॥
पठयौ सुदच्छिन ओर । करि सदाराम सजोर ॥
वहु और सूर समूह । रन-काज चढ्ढिय जूह ॥८॥
कवित्त—भूतनु सहित भूतनाथ मजबूत भए
पूतनु जगायौ सुनि चंडिका अवास मैं ।
चरवी चरैयनु कैं घरवी रह्यौ न कोई
धरवी भरधरवी घुमानै भूख प्यास मैं ॥
वीर वाम विहँसि विहँसि कैं विमान चढ़ीं
हरि मन हरपि वजायौ वीन हास मैं ।
जा समै समर काज पास मैं सुनायौ सूर
वा समैं अनंत सोद वाढ्यौ भू अकास मैं ॥
पद्धरी—
जब्वै सुजान किन्नौ पयान । सब्वै सुभट्ट दै दै निसान ॥
ज्यौं भीम भीम भारथ रिसान । तुरकान कौरवन करन घान ॥

आवज अनेक बज्जैं भयान। अति उद्ध पताका फरहरान॥
करि लावदार दीरघ दवान। गहि सेल सांग हुअ सावधान॥
केतेक धीर संधी कमान। केतेन तेग राखी भुजान॥
गान गाइक किय बीरनु बखान। सैंधू सुर पूरिय तिहीं थान॥
सुनि सूर-वदन जिम उओ भान। हुअ मुच्छ केस मुख सिंहमान
मुख देव देव हरदेव आन। हिय स्वामि-काम पन किय जवान

भुजंगी—तहीं खेत मैं पाखरौमल्ल आयौ।
लख्यौ सिंह सूजा महाछोह छायौ॥
तबै पाखरा बुद्धि जी मैं बिचारी।
अड़्यौ जंग सूजा तहाँ यों उचारी॥
चलौ साथ मेरे वजीरै दिखाऊँ।
कितौ तोपखानौ फते ले कराऊँ॥
इतौ बानि सूजा सुनै बाजि हंक्यौ।
चल्यौ पाखरा संगही ह्वै असक्यौ॥
दई घोर अंध्यार मैं घोर घाई।
कभूँ सामुहैं दाहिनै बाम घाई॥
घरी अद्ध मैं लै वजीरै दिखायौ।
लखै सूर मनसूर हू जीव पायौ॥
कही आफरीं आफरीं सिंह सूजा।
नहीं हिन्द हिन्दू सरी तोहि दूजा॥
तहाँ नंद वदनेस कै फेरि भाषी।
लखौ जंग मेरी रहौ पुट्ठि साखी॥११॥

पद्धरी—

सुनकैं सुजान वचननु वजीर। कहियौ हजार रहमति सुवीर ॥
तुमकौं न दोष मेरा कलाम। नहिं जग काम हुइ निसा साम ॥
इस वख्त सख्त तैं की जुमार। सबही सिपाह हुई सुमार ॥
तिसका सुमार करना जरूर। अब अवस जंग करना गरूर ॥
नहिं आफताब की रही जोत। अपना न गैर मालूम होत ॥
खुसवख्त मुझे करना जु तोहि। तौ डेरनु दाखिल करौ मोहि ॥
अब बड़ी फजर जो होनहार। रब रजा सु करना विचार ॥
सूरज समझायौ यौं वजीर। पुनि डेरनु लायौ धीर धीर ॥१२॥

दो०—यौं तोपनु की ज़ंग मैं सूरज कियौ अवाद।
ज्यौं होरी झर बीच तैं हरि राख्यो प्रहलाद ॥१३॥

त्रोटक—

पुनि भोर भयै वहु तोप दगीं। इतउत्त धमाधम हौंन लगीं।
छिपि भान गयौ निस फेर भई। दुहूं ओर झरी झर लोहमयी ॥
पुनि कीनिय दौर दिलीस दलं। गढ़ वल्लम पूरब ओर भलं ॥
दस खेत प्रमान रहे जबही। बलिरामहिं नूर कह्यौ तबही ॥
चढ़ि जाइ इन्हैं दबटाइ अरे। चढ़ि आवतु हैं चहुँ ओर खरे ॥
हनि मीर सिरैं बलिराम बली। तिहिं सैनहिं धाइय देतु कली ॥
सबही भट चोटनु देत भये। अपने अपने अरि बाँट लये ॥
मरते परते भट साहि भजे। रन पाइ विजय भटसूर गजे ॥१४॥

दो०—कछुक द्यौस बीते जहाँ आयौ माधव भूप।
दस हजार असवार की साजैं सैन अनूप ॥१५॥

प्रथम गाजदीखाँ मिल्यौ पुनि मनसूर सुजान ।
मधुकर ने समुझाइकैं मनौ संधि कौ ठान ॥१६॥
तुम हम सेवक साहि के हुकुम बजावन हार ।
आपुस के अहँकार सों होतु दिली-संहार ॥१७॥
यौं कहिकैं आमेरपति सबकौं दियौ मिलाइ ।
साहि अहम्मद सौं दुहूँ दीने विदा कराइ ॥१८॥
चल्यौ अवध के मुलक कौं दर कूचन मनसूर ।
सूरजहूँ को संग लै ब्रज कों चले जरूर ॥१९॥

पवंगा—सिंह जवाहर संग चल्यौ कमठेसहू ।
आए कामाँ तहाँ मिले वदनेसहूँ ॥
लै आए पुर दीघ कियौ सनमान हैं ।
मधुकर नेह जताइ गयो निज थान हैं ॥२०॥

इति श्रीमन्महाराज कुमार जदुकुलावतंस श्री सुजानसिंह हेतवे कवि सूदन विरचिते सुजान चरित्रे दिल्ली विध्वंसनो नाम षष्ठमो जंग सम्पूर्णम् ॥

दो०—ठारह सै सुद सोतरा हिम रितु महिना गोप ।
दच्छिन-दल दिल्ली-दलनु कीनौ ब्रज पै कोप ॥१॥
करि मिलाप वदनेस सौं कूरमसिंह सुजान ।
देखि भर्थपुर देव कौ वहुरचौ कियौ पयान ॥२॥

करी—

चलत कही मधुकर भूपाल । दखिनी आवतु तुम पै हाल ॥
जो तुम करौ आपनी संध । तौ हम ताकौं करैं प्रबन्ध ॥

तब सुजान मधुकर सौं कही। हमें आपु करिहौ सो सही ॥
जो कछु पहल मामलति भई। सो महाराज सवै सुनि लई ॥
वा माफिक वे मानैं आज। नाहीं तौ नाहीं महराज ॥
ये बातै कूरम धरि कान। कीनौ अपने देस पयान ॥
तबही रूपराम बुलवाइ। सोहू सब विधि पूरन आइ ॥
रूपराम सों कही सुजान। दखिनितु पास करो तुम जान ॥
तिनकै दलकौ सवै सुमारु। और जो उनके मन को सारु ॥
वे जो कहें सु धरिकैं कान। कीजै ब्याव महाबलवान ॥३॥

मनोरमा—

बीते कछू द्यौसही में जहाँ। आधी निसा डाँक आयौ तहाँ ॥
दीने समाचार ताही घरी। मार्‌यौ द.।दै बलू चौधरी ॥४॥

सो०—सो सुनि सिंह सुजान तुरत जानि बलिराम कौं।
कह्यौ दीघकौं जान लाला सौं जाहिर करौ ॥५॥
कहनी यहै सिताब सवै वरूथनि साजिकैं।
बरसाने कौं जाव मदति आगैं भेजियौ ॥६॥
ह्वै सवार बलिराम आयौ दीरघ नगर कौं।
जो कछु करनौ काम कह्यौ जवाहर सिंह सौं ॥७॥

दुपई—चलत चलत दखिनी बढ़ि आए जैपुर देरा दीने।
प्रथम भूप कूरम सौं करे ब्याव स्वाल ए कीने ॥
द्वादस लाख रुपैया दै कैं पुनि माधव नृप भाषी।
हर गोविंद होइ तुम सामिल जौ ब्रज को अभिलाषी ॥
ये सव समाचार जैपुर तैं माधव औ दखिनी के।

रूपराम लिखियौ ब्रज-भूपै साठ हजार अनी के ॥
और लिख्यौ सबकैं ए दखिनी तुम सौं जंगहिं जोरैं।
आपुन सावधान ह्वै रहियौ देस दुद की ओरैं ॥८॥

दो०—जैपुर सौं फरचौ कह्यौ आपा औ मल्लार।
रूपराम बुलवाइकैं पूछ्यौ कहा बिचार ॥९॥

सो०—पुनि बोल्यौ मल्लार दो करोर यहाँ देउगे।
मैं अब होत सवार रूपराम तुव देस पैं ॥१०॥

दो०—अब कैं सूरजमल्ल नै लूटी दिल्ली खूब।
दो करोर क्या बहुत है लिखि भेजै किनि तूब ॥११॥

सुगीतिका—तब दै असीस दुहून कों द्विज राम परम प्रवीन।
सुनिए जुबाब मलार के सब बोलियो मृदु पीन ॥
बड़ भाग हैं तुम सैन के ब्रज देखि हैं भरि नैन।
कछु लैन की बिधि ना बनै तहँ दैन को कछु भैन ॥
तुम सिंह श्री बदनेस सौं किय लैन दोइ करोर।
यह बात मोहि न सूझ ही वह देइगौ अनरोर ॥
सत कोटि है उहिं भौन मैं गज बाजि ओर न छोर।
दस पातसाही लूटिकैं दरबार ओढ़त खोर ॥
यह तासु की निज टेउ जानत सो बखानत राउ।
दवि दामहूँ नहिं देइगो उठि खर्च कोटिक जाउ ॥
तुम तासु पैं जुग कोटि चाहत मोहि है सु अँदेस।
मिलिहैं जुसारहि सार सौं अब कैं मिटै न कलेस ॥१२॥

दो०—उत इत के परताप हैं चारि लाख मो पास।
आपु लेउ सब कुसल सों मोहिं दुहुन की आस ॥१३॥
रूपराम के वचन कान धरि यह बोल्यौ मल्लार।
खंडी लै प्रोहित के घर तैं वाढ़ै कुजस अपार ॥१४॥

ललित पद—

कोटि किलौ खाई घन भाई जल बल जोर सु कहियै।
सो कितेक ब्रजराज-बदन कैं सो सब साँची लहियै ॥१५॥

भुजंगी—

तबै रूप ने बात साँची उचारी। ब्रजाधीस के ठाठ की बात भारी।
असीचारि के कोस कौ कोट बाँकौ। किलेदार है साँवरो चारि घाँकौ।
इतै बान गंगा उतै भानु जाई। बिधाता बनाई चुहूँ ओर खाई ॥
हवेली किलेदार की कोस नौंकी। कलिंदी सुनीरैं प्रलै केन भौकी ॥१६

दाव—रूपराम आपा मलार कौं गिरवर सनौ सुनायौ।
झूठ नहीं यह साखि भागवत आप व्यास मुनि गायौ ॥
ता कुल में बदनेस भूप है तुम सुरपति-पद पायौ।
कलि की मद्धि स्याम जू ने फिर वही बनाउ बनायौ ॥१७

दो०—दच्छिन दिस गिरि-पूछ है उत्तर दिस मुख नैन।
तहाँ सरोवर द्वै सरस राधाकृष्ण सुऐन ॥१८॥

छप्पय—इन्द्र इटायैं सहर अग्नि गोपाचल दुग्गहिं।
दच्छिन पुरी कल्यान नैरितिहिं नीमरान महि ॥
बरुन हस्थाने सोम मरुत दिस गढ़ मुकतेसुर ॥

रूपराम लिखियौ व्रज-भूपै साठ हजार अनी के ॥
और लिख्यौ सबकैं ए दखिनी तुम सौं जंगहिं जोरैं ।
आपुन सावधान ह्वै रहियौ देस दुंद की ओरैं ॥८॥

दो०—जैपुर सौं फरचौ कह्यौ आपा औ मल्लार ।
रूपराम बुलवाइकैं पूछ्यौ कहा विचार ॥९॥

सो०—पुनि बोल्यौ मल्लार दो करोर यहाँ देउगे ।
मैं अब होत सवार रूपराम तुव देस पैं ॥१०॥

दो०—अब कैं सूरजमल्ल नै लूटी दिल्ली खूब ।
दो करोर क्या बहुत है लिखि भेजै किनि तूव ॥११॥

सुगीतिका—तब दै असीस दुहून कौं द्विज राम परम प्रवीन ।
सुनिए जुवाव मलार के सब बोलियां मृदु पीन ॥
बड़ भाग हैं तुम सैन के व्रज देखि हैं भरि नैन ।
कछु लैन की विधि ना बनै तहँ दैन को कछु भैन ॥
तुम सिंह श्री बदनेस सौं किय लैन दोइ करोर ।
यह बात मोहि न सूझ ही वह देइगौ अनरोर ॥
सत कोटि है उहिं भौन मैं गज बाजि ओर न छोर ।
दस पातसाही लूटिकैं दरबार ओढ़त खोर ॥
यह तासु की निज टेउ जानत सो बखानत राउ ।
दवि दामहूँ नहिं देइगो उठि खर्च कोटिक जाउ ॥
तुम तासु पै जुग कोटि चाहत मोहि है सु अँदेस ।
मिलिहैं जु सारहिं सार सौं अब कैं मिटै न कलेस ॥१२॥

दो०—उत इत के परताप हैं चारि लाख मो पास।
आपु लेउ सब कुसल सों मोहिं दुहुन की आस ॥१३॥
रूपराम के वचन कान धरि यह बोल्यौ मल्लार।
खंडी लै प्रोहित के घर तैं बाढ़ै कुजस अपार ॥१४॥

ललित पद—

कोटि किलौ खाई घन भाई जल थल जोर सु कहियै।
सो कितेक व्रजराज-वदन कैं सो सब साँचो लहियै ॥१५॥

भुजंगी—

तबै रूप ने बात साँची उचारी। व्रजाधीस के ठाठ की बात भारी।
असीचारि के कोस कौ कोट बाँकौ। किलेदार है साँवरो चारि थाँकौ।
इतै थान गंगा उतै भानु जाई। विधाता बनाई चुहूँ ओर खाई॥
हवेली किलेदार को कोस नौंको। कलिंदी सुनीरैं प्रलै केन भौंको ॥१६

दाव—रूपराम आपा मलार कौं गिरवर सनौ सुनायौ।
झूठ नहीं यह साखि भागवत आप व्यास मुनि गायौ॥
ता कुल में वदनेस भूप हैं तुम सुरपति-पद पायौ।
कलि की सद्धि स्याम जू ने फिर वही बनाउ बनायौ ॥१७

दो०—दच्छिन दिस गिरि-पृष्ठ है उत्तर दिस सुख नैन।
तहाँ सरोवर है सरस राधाकृष्ण सुऐन ॥१८॥

छप्पय—इन्द्र इटावैं सहर अग्नि गोपाचल दुग्गहिं।
दच्छिन पुरी कल्यान नैरितिहिं नीमरान महि॥
वरुन हुखानै सीन मरुत दिस गढ़ मुक्तेसुर॥

उत्तर दिग गढ़ राम ईस सहपऊ परें धर ॥
इतनीक भूमि वसुदेव सुत वदनसिंह भूपहिं दई ।
तुरकान तेज परिहरि सकल आन पीतपट की भई ॥१९॥

दो०—तुम तारे नृप जे भरनि ते पारे व्रजराज ।
दस हजार भट आपसों चाहत समर समाज ॥२०॥
चारि लाख वदनेस कैं हैदल पैदल त्यार ।
किलेदार गिरवर-धरन ताकी सैन अपार ॥२१॥
कोट किलौ परिखा सुभट भाई श्रीय समाज ।
मंत्री सिंह सुजान-सुत व्रजपति को जुवराज ॥२२॥
ताहि तुम्हैं पर भूमि मैं बजो तेग कै वार ।
कहा कहौं सो आपुही जानत राउ मलार ॥२३॥

इति प्रथम अंक ।

दो०—रूपराम के वचन सुनि वोल्यो राउ मलार ।
सत्ति सत्ति तैंने कह्यौ व्रजपति कौ ब्यौहार ॥१॥
जो धरनी वरनी जुतैं रूपराम सविलास ।
ताहि देखि हैं नैन सौं सव दक्खिन तो पास ॥२॥
कछू उमाह्यौ हो हमैं कछू वुलाए साहि ।
वड़गूजर को मारिवौ सुनि आए भुव गाहि ॥३॥

कवित्त—गुज्ज भुज्ज द्रविड़ तिलंग वंग गौढ़ गढ़ा ।
मंडला उड़ीसा लै वघेल औ वुंदेलखंड ॥
झार खंड मगध मलार गंगा पार डाँग
ऊमट उचार मालुया मैं न राख्यौ षंड ॥

हड़ौती ढुँढाहर भदावरि दिल्लीपति के
सहित उजीर उमराई राय पाए दंड।
सेवा संभा साऊ राम राजा के जलेवदार
एक व्रजदेस वदनेस ही रह्यौ अदंड ॥४॥

संयुता—

पुनि यौं कह्यौ सु मलारनै। थल वै सवै सु निहारनै ॥
यह मैं कहौं निज टेक कैं। व्रज-भूमि दक्खिन एक कैं ॥
तव दो करोरहिं लेहिंगे। व्रजराज दाम न देहिंगे।
पटपीत की उन ओट है। इत आपु संकर जोट है ॥
तव मामलति ह्वै जायगी। जुरि जंग कै ठहराइगी ॥
यह भापि राउ मलार ने। पुनि वोलि आप कुँवार ने ॥
ढिंग देखि खंडू सौं कही। अव कूच ही करनौ सही ॥
सजि आपुनी सव वाहिनी। धर मेव की अवगाहिनी ॥
यहु द्यौस कौ नहिं काम है। व्रजभूमि फेरि मुकाम है ॥
धरि सीस आयसु वाप कौं। दल साजि खंडू आपकौं ॥
असवार चार हजार सौं। किय कूच संग वहार सौं ॥
अति दीह डंकनु देत भौ। भुव मेव की पथ लेतु भौ ॥५॥

चपला—आवै है खंडू मेवातैं। रूपा ने भेजी ये वातैं ॥
मल्लारै आयो ही जानौ। ढीलै ना कीजो जो ठानौ ॥६॥

दो०—आयौ राउ मलार-सुत सुनि सुजान को नंद।
जुद्ध-काज उद्धत भयौ अंग अंग आनन्द ॥७॥

यह सुनिकैं सूरजवली उतमैं राउ मलार।
दोउन के चिन्ता बढ़ी जाने पूत जुझार ॥८॥

छप्पय—दोऊ उमरि अराक दुहुन उनमाद रारि हित।
दोऊ जानत जीति, हारि जानत न दुहूँ चित ॥
नहीं जीति सौं जीति हारि सौं होत हारि ही।
दोऊ निज निज सुतनु लिख्यौ जलदी विचारिही ॥
खंडू न जंग मो विन रचहु सपथ लिखी मल्लार ने।
ह्याँ निसाँ करतु ब्रजराज की रूपराम इहि कारनै ॥९॥

पवंगा—तबै जवाहर सिंह दीघ मैं आइयौ।
उततैं सिंह सुजान ब्रजेस बुलाइयौ ॥
ज्यौं असुरन के हतन जतन हित देवता।
मतौ करैं जगदीस ईस बिधि सेवता ॥१०॥

कवित्त—दीघ में दीरघ सभा कै चारि डूँगनु की
बैठ्यौ ब्रजराज बदनेस महाराज है।
पूरन पुरुष परिपूरन बिराजै साज
सूरत कौ मडल अखंडित दराज है ॥
सनमुख सूरज जवाहर लसत दोउ।
मानौ गुन तीन देहधारी को समाज है।
कैधों सिवलोचन निगम दुख मोचन कौं,
कैधो तीन देवता विचारैं सुरकाज है ॥११॥

छप्पय – पुनि महाराजधिराज चित्त बदनेस बिचारिय।
मोदन मोदी बोलि ताहि निज वचन उचारिय ॥

कहौ किती ततबीर अन्न घृत तेल नौंन की।
सो साँची कहि देउ और विधि करौं हौ न की॥
यौं सुनत सुगंगाराम सुत चारि लाख नर नित कही।
द्वै बरस लरौ मल्लार सौं खान पान मोपर सही॥१२॥
सो सुनिकै व्रजनाथ ताहि स्याबास सुनायौ।
फेरि दुग्ग दीवान निकट भञ्जूहि बुलायौ॥
कह्यौ वचन यह ताहि तैयारी दारू गोला।
हाजर कहि सो मोहि तबै भञ्जू यह बोला॥
महाराज लरौ निहचिंत ह्वै बरसन लौं मल्लार सौं।
जो जहाँ चाहियै सो जिनसि पहुँचै एक हँकार सौं॥१३

दो०—मोदी औ दीवान की अरज सुनत महाराज।
रहौ जवाहर के निकट यहै तुमारौ काज॥१४॥

सो०—उततैं राउ मलार जैपुर तैं कूँचहि कियौ।
जैसैं सलभ अपार उठै प्रजा संहार कौं॥१५॥

कवित्त—सहस नगारे सहसनुही निसानवारे।
सहस सहस जूथपतिन उमंड की।
अवनि अवास देस दुग्गनु भै त्रास देत
विकट निवासन उदासत घुमंड की॥
सूदन सरित शृङ्गी कुपथ सुपथ कीने
मानौ वारिधारिनै मृजाद बेलि खंड की।
उद्धत उदंड की मलार आपा चंड की यौं
आई सैन घोर कलिकाल दलवंड की॥१६।

सो०—तहाँ फेरि मल्लार रूपराम द्विज सौं कही।
तै कछु कर्यौ सुमारु या दल तैं दस गुन करौं ॥१७॥

प्रमानिका—

वड़ौ प्रतापु आपु कौ। उथाप भूमि थापु कौ॥
सवार चारि लाखहू। समेटि जंग भाखहू॥
तऊ न दुग्ग तोरिहौ। वृथा अनीक जोरिहौ॥
किलेजुदार या धरा। सुजंग जीति कौ घरा॥
छ कोटि सैन को पती। करी जु तासु की गती॥
प्रसंग कान दै सुनौ। न झूठ ता समैं गनौं॥
मलार बोलि आमजू। कहौ सुरूपराम जू॥
सुरूपराम ता घरी। करी कथा उजागरी॥१८॥

पद्धरी—

सतजुग्ग मद्धि मुचकुंद भूप। इछ्वाकु बंस उद्धत अनूप॥
तिन कियौ देवतनु कौ सहाय। करि जुद्ध दैत्य मारे अवाय॥
तव सवै देवता ह्वै-प्रसन्न। मुचकुंदहि भाषिय धन्न धन्न॥
वर माँगि भूप सो होइचित्त। तैं करे वाहुवल हम सुचित्त॥
सुनि भूप कही वर एहि देहु। चित वासुदेव सों होइ नेहु॥
मैं सोयौ चाहत वहुत काल। निर्विघ्न कीजिए लखि हवाल॥
जुग तीन अन्त लौं सोइ ईस। नहिं कोइ जगावै विसै वीस॥
अस आनि जगावै जो भुवाल। तो दृष्टि पाइ पावै सुकाल॥
लखि मथुरा तैं दच्छिन दिसाहि। चामिल तरंगिनी तट सराहि॥
तहँ अचल कंदरा लखि इकंत। छिति कंत वहाँ सोयौ सुखंत॥१९

दो०—सो नृप सोयो कंदरा बहुत काल गए बीत।
या ब्रज की रच्छा करन प्रगटे कृष्ण अभीत ॥२०॥
सोधि सोधि यह धरनि में मारे असुर उदंड।
काल जमुन काबिल भयो दैत्यराज परचंड ॥२१॥
दिसा आठ हू जीति कैं जुद्ध अघानौ नाहिं।
बैठि मेरु की शिखर पै रन सोचत मन माँहि ॥२२॥
तहाँ गगन मग आइयौ मगन कलह को रूप।
गान करत हरि के गुननु नारद भेष अनूप ॥२३॥
सो०—सुनि मुनि बोल्यौ बैन काल जमुन साँची कहौं।
तो सम जुद्धहिं दैन मथुरा मैं श्रीकृष्ण हैं ॥२४॥

छप्पय—

काल जमुन तिहिं काल लाल लोचन कराल तन।
अति उताल चलि चाल ढाल किरवाल धारिपन ॥
छह करोर गज बाजि जोरि मुच्छन मरोरि मुख।
किय पयान घन के समान नीसान स्याम रुख ॥
दसहूँ दिसान खलभल परिय थल जल्ल, जल दलदल करिय।
बहुँ जमनकाल बिकराल दल ज्यौं अकाल ज्वाला झरिय ॥२५॥

दो०—जमन-राजको जमन वह मथुरा आयो धाइ ॥
कालजमन को आइवौ कृष्णै दियौ सुनाय ॥२६॥
और कह्यो जो हो कयौ जमन-राज रन काज।
थने दैत्य तैंने हने काढ़ौं बैर सुम्हाज ॥२७॥

हरि—सुनि दूत वचन बोले । ब्रजचंद बैन खोले ॥
हम जुद्ध कौं न जानैं । नाह सस्त्र हाथ ठानैं ॥
हम कौन असुर मार्‌यौ । तुमने जु रोस धार्‌यौ ॥
जो आपु हतन आवै । तातैं दई बचावै ॥
हम नंद गोप द्वारैं । बछरा सुगाइ चारैं ॥
दधि दूध माँगि पायौ । नवनीत चोरि खायौ ॥
पर जो न जमन मानै । तौ ढीलहू न ठानै ॥
आए अतिथ्य पासैं । कैसे करौं निरासैं ॥२८॥

निगालिका—प्रभात भौ सुहात भौ । छली छलो जगे बली ।
तिहीं घरी उठे हरी । न देरहू कछू करी ॥२९॥

कवित्त—ऐंठि बाँध्यौ मुकट समेटि घुँघरारे बार
कुँडल चढ़ाए कान कलगी सुघट की ।
जाँघिया जकरि कैं अकरि अंग राग करि
कटि मैं लपेटी कसि पेटी पीतपट की ॥
भृगुपद-अंक ढाल सकति श्रिया कौ चिन्ह
सूदन सनाह बनमाल लाल टटकी ।
कोटिन सुभट की निहारि गति सटकी
सुसुन्दर गोपाल की धरनि भेप भटकी ॥३०॥
मद भरे लोचन बिसद अंग आभा चारु
लच्छ लच्छ हंस की सी सोभ अघतंस की ।
ताल अंक उर पैं विसाल नील पट फैंट
सत्रु कीन संस संस संक भरि कंस की ॥

आयुध अनेक रेवती के कंत जू के तऊ
सायुध भए हैं हल मूसल प्रसंस की।
जमन के वंस को निवंस की विचारि चित
वसुदेव अंस की है लाज जदुवंस की ॥३१॥

नीसानी—सज्जि खड़े वसुदेव देव घोर मडन हारे।
काल जमन तिहिं काल ही आयौ ललकारे॥
वरुन दिसा खुर खेह सों हुई घन अंधी।
स्याम निसानौं सैं छई डकौ धुनि वंधी॥
वेखि तिन्हें श्रीकृष्णजी हलधर सैं अक्खी।
इसदे लरने दी क्रिया अस्सी दिल रक्खी॥
सुत्ता था जिस मेरु दी कंदर दे अंदर।
तिथ्थों पैठे स्याम जी छलवली लुकंदर॥
सुत्ता लखि मुचकुंदनूँ ढकि पीतंवर।
अलख अलख ही हो गए गहि रूप धरंवर॥
उस ठाँ आया जमन भी अंवर लखि भरमा।
तद लक्खाँ वो जादवाँ सूता ज्यौं वरमा॥
जुट्टि जंग मैं भग्गना निंद्रा तुम्ह केही।
खेल न होवै जुज्भना सुप्योंदी देही॥
यों कहि कैं मुचकुंद कौं पैरों से घत्ता।
सो जग्गा दृग लाल सैं ज्यौं जवा भरत्ता॥
तिसदी चाहन सैं कढ़ी दाहनि उस वेली।
काल जमनि तिसनैं किया खक्खा दी ढेली॥३२॥

दो०—दरसन लहि गोविन्द को महाभाग मुचकंद ।
करि प्रनाम लाग्यो करन अस्तुति बुद्धि विलंद ॥३३॥

छप्पय—जै जै श्रीव्रजचंद नंदनंदन अनंद-निधि ।
सगुन सच्चिदानंद छंद बंदन सुछंद बिधि ॥
बृंदारक वृंदनि विलंद जय मंदिर दायक ।
जै बृंदावन तुलिन रचित लीला रुचि लाइक ॥
जगमगत सुजस चौदह भुवन सेवक को संकट हरन ।
जै रमानाथ जदुनाथ जै जै जै गोवर्धन धरन ॥३४॥

इति श्री सम्पूर्णम् ।

# शब्द-कोश

## प्रथम जंग

पृ० १ गलौ—(ग्लौ) चन्द्रमा। गुह्यपति—कुबेर। गंधवाह—पवन। अभौ—(अभय) अभीति।

पृ० २ हंस—सूर्य। रौरिया—लड़ाका, शिव। पच्चै—पंचमसिंह। परताप—राणा प्रताप।

३ किरवान कमान—तलवार। गाहिकै—अवगाहन करके। थाप—स्थापित करके। धनेस—कुबेर। नखेतग—चन्द्र। पर-उर—शत्रु के हृदय। कुरएस—पाण्डु। दिनेस···है—यम। अलकेस—कुबेर, कुबेर के पुत्रों का नाम नल कूबर।

४ विरझियो—युद्ध किया। म्रजाद—मर्यादा।

५ ठारै दुहोतरा—१८०२ दग्ग—दुर्ग। कभू—कभी। अमान (अ)—रक्षा। दुःख न देना। आरस—(आदर्श) दर्पण। गयंद—(गजेन्द्र) मस्तगज। मद्धि—मध्य में। जूथप—यूथप एक समूह का स्वामी। परसै—(स्पर्श) जिसको स्पर्श करती है।

६ दराज (फा०) बड़ा, दीर्घ। पाइक—सेवक। तुरकी···कच्छी—कवि ने घोड़ों के भेदों के नाम लिखे हैं। नौने मौने—लावण्ययुक्त तथा कोमल, अत्यन्त सुन्दर। खगराइ—खगराज, गरुड़ जिनकी चाल··· पवन। गवन की—इन दो पंक्तियों में अक्रमता दोष है क्योंकि मन की गति का वर्णन करके कुरंग, खगराज और पवन की गति का वर्णन है। समद्द—समद, मद सहित। दुरद्द—द्विरद, हाथी। परदल—शत्रुसेना। दलद्द—नष्ट करने वाले। किमत—कीमत, मूल्य।

७—उदभट—(उद्भट) प्रचंड। मसलति—(अ० मसलहत) अच्छी राय, सम्मति। सारति—(फा० इशारत) इशारा करना, संकेत। दीप—(द्वीप) टोक। साप—अन्य से।

८—राइरानैंनु—रायरायान अधीन राजवर्ग। फतेहूअली—फतह-अली। रुखसत—(अ०) छुट्टी, विदा। साइत—शुभ घड़ी, शुभ मुहूर्त। भुव मान—पृथ्वी का सम्मान।

६—वियौसु—द्वितीय तु-दूसरा। कौल-वचन—विश्वास दिला के। ब्यौरौ—विवरण, हाल। नकीब—(फा०) भाट, बंदीजन। वरन—वर्ण, ब्राह्मणादि। पटह—वाद्यविशेष। मदति—(फा०) मदद-सहायता। कोल—अलीगढ़ का प्राचीन नाम।

१०—क्रुद्ध—क्रोध। उनमान—अँदाज। दरपुस्त—(फा० दरपुश्त) कई पीढ़ी तक। मेहर—दया। सूत—सलाह, मेल। खेत—रणस्थल। अट्टानी—अटकी, चुभी। आगा—फा० स्वामी। फजए—(अ०) प्रातःकाल। गजर—घंटा। हुतास—अग्नि।

११—इतकाद—अ० (एतक़ाद) विश्वास। गौर—(अ० ग़ौर) सोचना विचारना। कलि भास्थ—भीम आन कलियुग के महाभारत का दूसरा भीम। निसान—यह शब्द इस पुस्तक में दो अर्थों में प्रयुक्त हुआ है (१) वाद्य-विशेष, (२) झण्डा। किन्तु यहाँ नगाड़े के अर्थ में है। अक—(अर्क) सूर्य। निनद्द—निनाद शब्द। अहद्द, विहद्द—असीम। सद्द—(सदा) शब्द।

१२—जँजाल—(अ० जजील:) ढड़—छोटी तोप। जुद्ध—युद्ध उद्ध—(ऊर्ध्व) ऊपर। पल-चर—मांस भक्षी। जुग्गिन—योगिनी। नागीय—नग्न। रहस—(रहसि) एकान्त। थिरात—तैरते हैं। भारती—सरस्वती।

१३—समसेर—(फा० शमशेर) तलवार। छतजात—(छतज) रक्त। भुंसुडिनु—बाणों की।

१४—त्रिच्चिय—बीती, प्राणों पर बनी। रिच्चिय—भाग गई। त्रन—तृण, तिनका।

## द्वितीय जंग

१५—गंग धरनि—शिव । सुरेस—दिल्ली नरेश ।

१६—करी - गज, जिस प्रकार भगवान् गरुड़ध्वज ने ग्राह से ग की रक्षा की थी । वरछैत—योधा । दंति—हाथी । तूर—वाद्य विशेष दुयन—शत्रु । डिड़ न रहे—धैर्य न रहा । हयंद—हयेन्द्र, अश्वराज

१७—जोतिस के जाता—ज्योतिष के जानने वाले । मघवान- इन्द्र । डढ्ढ—दग्ध हो गये । छंडिय—छोड़ दी । तच्छिन—तत्क्षण

१८—चित चाइ—प्रसन्न चित्त । ब्रजभाषा—'चाउ' का प्रयं उत्सुकता संवलित प्रसन्नता के लिए होता है । नूर—( अ० ) कानि प्रकाश । जमडाढ़—आयुध विशेष ।

१९—अग्ग—अग्र, आगे । पग्ग—पग, पैर । मग्ग—मार खग्ग—खड्ग, तलवार । उथ्थौं—उधर । इथ्थौं—इधर । झुट्ट झुट्टे—समूह के समूह । श्रौन—रक्त ।

२०—द्रगि—(दृग) आँख । चमू—सेना । बरगी—(फा० बारगी जो सवार राज्य के घोड़े पर नौकर हो ।

२१—संधै—संधान कर धारण कर, सुसज्जित हो कर । तुंग—ऊं निवार—काई । सुक्कि—शुष्क, सूखा ।

इस छप्पय में कवि ने रणस्थली का क्षीण सरोवर से समस्त दे वर्ती रूपक बांधा है । रूपक का अच्छा उदाहरण है । वीभत्स प्रस्फुटित हुआ है ।

तट—आसपास । विरतंत—वृत्तान्त ।

२२—उछाह—उत्साह । केऊ—कितने ही । भावतु—अच्छ लगता है ।

२३—मन बच काइ—मनसा वाचा कायेन । परताप—प्रताप ।

## तृतीय जंग

अचलै—अंचल। वेतन बाँटने वाला अफसर यह छंद हास्य रस का बड़ा उत्कृष्ट उदाहरण है। यकसी—( फा० बख्शी )। कलेसहिं—( क्लेश ) युद्ध। पील—(फा०) हाथी। कढि ढय—निकल आया।

२५ निपातहिं—पतन। तरन तरणि, सूर्य। तनेने—तीव्र। तेह—तेज, प्रतपाप।

२६—भै भय। उदेग- उद्वेग, चिन्ता। कवाद- (अ० क़वायद)। नियम प्रणाम करने का युद्धीय ढंग। वेग शीघ्र। माफिक—अनुसार।

२७—कन्न कान। यहाँ पर पंजाबी का प्रयोग अधिक है। हमनूँ मैं भी। तुसी—तुझको। आवने भेद—आने का कारण। फरमाना ( फा० फर्मान ) राजकीय आज्ञापत्र। तैर - तले, नीचे अधिकार में। होर—और। दा, दी और दे पंजाबी में का, की के विभक्तियों के स्थान में प्रयुक्त होती हैं। कबूल -(अ० क़बूल) स्वीकार होइसी—होगा।

२८ ह्याइं—इसी स्थान में। तकसी यकसी के साथ तकसी का प्रयोग है नष्ट करना।

२९—सैद - सैयद, मुसलमानों का एक वर्ग विशेष। रोझपट्ठे—एक जंगली जानवर। जट्ट—जाट। ठाए स्थित। मसमुंद—( अ० मसदूद ) बंद कर दी। चारों ओर से घेर ली।

३० असित (अश्वेत) काला। मतंग—मातङ्ग, हाथी। तबल्ल तबला, एक वाद्य विशेष।

इस छप्पय छन्द की अंतिम पंक्तियों में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

३१ पुठवार पृष्ठ भाग पीछे की ओर। छोह—क्षोभ-क्रोध ग्रह। रीसैं—ईर्ष्या, स्पर्धा। रैनचारी - रात्रिचर, राक्षस। पलाइ पलायन, भाग गए।

३२—जम-किंकर - यमदूत। विफरे—उत्साह पूर्वक युद्ध करने लगे।

चुटे- कटे। फेरि बगद - दूसरी बार लौट कर। रेत - धूलि।

३३ - चकत्ता - ( अ० चग़त्ता ' दिल्ली के सम्राट् जो चग़ताई वंश के थे। अदेस—आदेश, आज्ञा। पर के सिर - शत्रु मुंड। भोर - प्रातः कालीन।

३४ - इखलास - अ० मित्रता। सिताब - ( फा० शिताब ) शीघ्र। प्रमान - मान्य, स्वीकार।

३५ गाँठ्यौ दावु - अवसर पकड़ा। मुस्तकीम - (अ० मुस्तक़ीम) दृढ़, सीधा, पक्का। टोइ—खोज कर, देख कर।

## चतुर्थ जंग

३६ -- किसु किस पर। नौगुन यज्ञोपवीत। अमल - अ० अधिकार। वेअदबी - फा० आज्ञाभंग। जेर - (फा० ज़ेर) नीचे कर दो, दबा दो।

३७ दर -- भय। मुझपै ... सख्त - मैं आपत्ति में फँस गया हूँ। सुतर--ऊँट ( फा० शुतर )।

३८ उत्ताल - तेज़, तीव्र। पयान - प्रयाण, गमन। फरवान— फरमान, आज्ञापत्र। रुक्का - पत्र।

३९ हरौलहि - एक पदाधिकारी कोतवाल। बहीर -- डेरा आदि सामग्री। सूरज सुवनुत - सूर्य और मंगल। ज्योतिष का यह सिद्धान्त है कि यदि सूर्य और मंगल दोनों ग्रह एक राशि पर आ कर मिलें तो वर्षा नहीं होती। भूरज - (भूराज) पृथ्वी के राजाओं की।

४१ - जुर्बी - (फा० ज़ुर्बी) थोड़ी। रेजा - (फा० रेज़ः) अंश टुकड़ा। गौर रक्खा विचार ध्यान।

४२ - खुसाल - ( फा० खुशहाल ) । खुस्याल - सम्पन्न, प्रसन्न। चकवै - चक्रवर्ती। चौकस - सतर्क। भानोंगे - नष्ट करोगे।

४३ -- कोरतैं—कोल से। धरा धराके—पृथ्वी को धारण करने वाले।

४४ – अरवैदल – अक्षयदल बड़ा भारी दल। तररानौ – सीधा। हरीफ – (अ० हरीफ़) वैरी। लोक जोरू – स्त्री पुत्रों के साथ।

४५ – चन्द्रभाल…सूरज लसिय, इस छप्पय छन्द में सूरज को सागर का रूप दिया गया है। सागर से निकले हुए चौदहो रत्नों की समता सूरज के भाल आदिक से दी गई है। सुरभोग अमृत। कंबु – शंख। कामद गाय – कामधेनु। लिन्निय – लेलीं। किन्निय—कर दिये। बंगस-सुत – अहमदखान पठान जिसके विरुद्ध युद्ध हो रहा था। चित्त चित्तिय चित्त में विचारने लगा।

४६ – बुज्झै – समझै। जुज्झै – युद्ध करता। हमतौं अच्छे आप से हमारे आप के बीच शत्रुता नहीं है। दाया—झगड़ा।

४७—आटि—दाव कर। हयौ – मारा जायगा। थान – स्थान।

रुपे – अड़ गये। भपु—भक्ष्य, भोजन। धए – धाए, दौड़े। गच्छती - जाती हैं। जूंभा—जँभाई। तूव - (तू अव) तू इस समय।

५० – बहुरयौ – फिरा। सीन - (फा० सीनः) वक्षस्थल। पाउ – पैर। किन्नो - कर डाला। सुधौं – सहित।

५१—नीहार—वर्फ, कुहरा। धुरवान—घनघटा। तड़ितान-बिजली।

५२—मंगल—तन्तामक ग्रह, युद्ध का अधिष्ठातृ देव। कालजमन—एक राक्षस जिसके युद्ध की कथा अन्त में दी हुई है। मुचकुंद की नेत्र-ज्वाला से भस्म हो गया था। चाहिय—देखने लगा। गुलफ़—पैर की एक गाँठ। वधूक—बंधूक, एक पुष्प विशेष जिसका रंग लाल माना जाता है। दुपहरिया का फूल। ५३ हर्यानी—हरी हो गई है। मगरूर – (अ० मग़रूर) गर्वीले, गर्वित। नरनुनाह – नरनाह, राजा। खग्गिय – डटा है। ५४ – अनीक – सेना। मेंड़ू – हाथरस जंकसन स्टेशन का नाम ही मेंडू है। भवनन्द – शिवसुत। दुख निकंद – दुःख दूर करने वाले।

५५ – घनो सार – अधिक लोहा, अधिक मारकाट की।